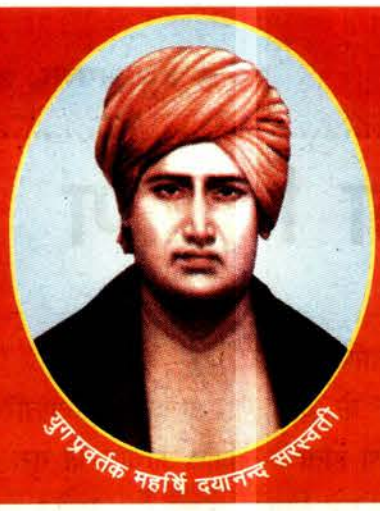

ओ३म्

वैदिक संस्कृति का उद्घो

वैदिक सार्वदेशिक

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली का साप्ताहिक मुख-पत्र

शुल्क :- एक प्रति 5 रुपया (भारत में) वार्षिक 250 रुपये तथा आजीवन 2500 रुपये

वर्ष 12 अंक 5 कुल पृष्ठ-8 24 से 30 अगस्त, 2017 दयानन्दाब्द 193 सृष्टि सम्वत् 1960853118 सम्वत् 2074 भा. शु.-02

5 सितम्बर शिक्षक दिवस पर विशेष आह्वान

शिक्षार्थियों को चरित्र सम्पदा से विभूषित करने का संकल्प लें शिक्षक बन्धु

गुरुकुल खोलकर आर्य समाज भवनों का करें सदुपयोग

– स्वामी आर्यवेश

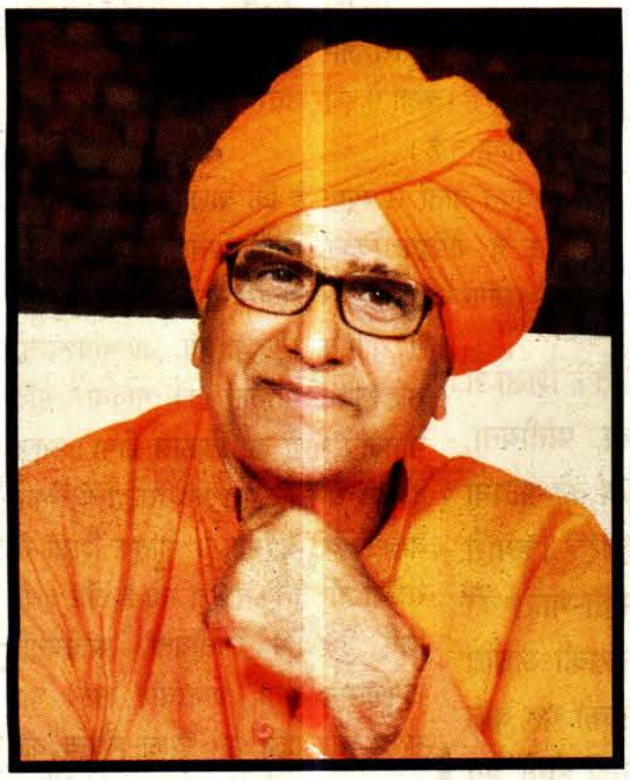

जब कोई व्यक्ति किसी दूसरे व्यक्ति में ज्ञान का संचरण करता है तो वह शिक्षक कहलाता है। शिक्षक को यह परिभाषा भारत के राष्ट्रपति रहे उच्चकोटि के शिक्षक और दार्शनिक डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन ने दी थी। उनकी दृष्टि में शिक्षण, सामाजिक और नैतिक दोनों ही दृष्टिकोण से उच्चतम कर्म है। आज के छात्रों का बौद्धिक एवं व्यवहारिक ज्ञान देखकर शिक्षकों की प्रतिबद्धता और निष्ठा का सहज अनुमान लगाया जा सकता है? ऐसा नहीं है कि शिक्षकों द्वारा छात्रों में ज्ञान का संचार नहीं किया जा रहा लेकिन यह ज्ञान एकांगी है। आज के शिक्षक मात्र प्राविधिक कौशल को आगे बढ़ाने में लगे हैं जो ज्ञान देने का पूर्ण उद्देश्य न होकर मात्र उसका एक भाग है।

जब हम ज्ञान की बात करते हैं तो मन–मस्तिष्क में एक ऐसे ज्ञान की रूपरेखा उभरती है जो मनुष्य को रुढ़ियों, अन्धविश्वासों, संकीर्णताओं और दुर्व्यसनों से ऊपर उठा दे। लोगों में प्रेम, सद्भाव, ईश्वरभक्ति, राष्ट्रभक्ति, मातृ–पितृ भक्ति, सहयोग तथा समर्पण की भावना जगा दे, लेकिन आज के शिक्षक इस तरह का ज्ञान देने में पूर्णतः विफल हैं। छात्रों में चारित्रिक एवं नैतिक गुणों का अभाव जिस रफ्तार से बढ़ रहा है वह समाज के लिए एक चिन्ता का विषय है। आज हालत यह है कि बी.ए., एम.ए. की डिग्री लिये बहुत से छात्र नैतिकता और विवेक जैसे शब्दों को परिभाषित भी नहीं कर सकते। यह एक चिन्तनीय स्थिति है।

हमारे स्कूल व कॉलेज जिस तेजी से राजनीति के शिकार हो रहे हैं वह शिक्षण व्यवस्था को खराब करने में कोई कसर नहीं छोड़ रहा है। शिक्षा, शिक्षक एवं छात्र इस राजनैतिक परिवेश में अपनी अस्मिता खोते जा रहे हैं। इन सबका एक ही कारण नजर आ रहा है वह है हमारी दूषित शिक्षा व्यवस्था। अंग्रेज चले गये लेकिन मैकाले द्वारा प्रदत्त शिक्षा प्रणाली ने देश में पूरी तरह पैर पसार लिये हैं। परिवार, समाज, राष्ट्र तथा उसके सदस्य वैसे ही होंगे जैसी वहाँ की शिक्षा प्रणाली होगी। जैसी शिक्षा वैसा समाज अथवा जैसे विद्यार्थी वैसे राजाधिकारी व कर्मचारी। इसीलिए आज का पढ़ा–लिखा व्यक्ति, कर्मचारी, अधिकारी अपने ज्ञान का प्रयोग समाज सेवा या देश सेवा में नहीं करता, अपितु वह केवल कामचोरी, हेराफेरी, रिश्वतखोरी अथवा अन्य अनियमितताओं को करने में अपनी बुद्धि को लगाना जीवन का लक्ष्य समझता है। क्योंकि उसे बचपन से युवावस्था तक मिली शिक्षा में विज्ञानवादी, सेवाभावी, मानवतावादी या राष्ट्रवादी होने के संस्कार नहीं मिले।

शतपथ ब्रह्माण का यह वचन, 'मातृमान, पितृमान, आचार्यवान पुरुषो वेदाः।' अर्थात् बालक के जीवनरूपी महल के निर्माण में माता–पिता तथा गुरु तीनों ही चतुर शिल्पकारों की आवश्यकता पड़ती है। इसी प्रकार राष्ट्र की उन्नति के तीन आधार स्तम्भ माने गये। आचार्य, उपदेशक तथा नेता इन तीनों में आचार्य का स्थान सर्वप्रथम है। क्योंकि आचार्य से ही शिक्षा प्राप्त करके उपदेशक और नेताओं का निर्माण होता है। जब तीन उत्तम शिक्षक अर्थात् माता, पिता व आचार्य अपने उत्तरदायित्व को भलीभांति निभाते हैं तभी बच्चों में संस्कार तथा जीवन जीने की कला प्राप्त होती है। रचनात्मक, व्यवहारिक, प्रभावी तथा जीवन निर्माण करने वाली यदि कोई शिक्षा है तो वह है गुरुकुलीय शिक्षा प्रणाली। गुरुकुलीय शिक्षा के प्रारम्भ में वेदारम्भ संस्कार के साथ गुरुकुल में प्रविष्ठ होने वाले ब्रह्मचारियों के लिए आचार्य घोषणा करता है कि इन ब्रह्मचारियों को आज से मैं गर्भ में धारण करता हूँ। इसका तात्पर्य है कि बालक का पालन–पोषण, शिक्षा–दीक्षा का उत्तरदायित्व माता के समान करने की घोषणा आचार्य करता है। जिस प्रकार गर्भ में स्थित अपने बच्चे का ध्यान हर प्रकार से माता रखती है उसी प्रकार गुरु भी अपने शिष्यों का हर प्रकार से ध्यान रखता है। बच्चों के चतुर्मुखी निर्माण के लिए गुरुकुल में प्रवेश दिलाया जाता था। यह एक ऐसी परम्परा थी जिसमें बच्चों का चतुर्दिक विकास होता था। अमीर–गरीब, राजा–निर्धन सभी को शिक्षा के समान अवसर प्रदान किये जाते थे। समस्त विद्याओं को प्राप्त करने तथा जीवन को सार्थकता प्रदान करने के लिए बच्चे की बुद्धि को प्रखर बनाने की नितान्त आवश्यकता होती है और यह कार्य गुरुकुलीय शिक्षा में आचार्यों द्वारा किया जाता है। इतना ही नहीं महर्षि दयानन्द जी सरस्वती द्वारा निर्धारित निर्देशों के अनुसार सभी ब्रह्मचारियों को तुल्य खान–पान, तुल्य आसन और तुल्य वस्त्र परिधान देने की परम्परा आज भी स्थापित है। आज एक गलत धारणा लोगों में व्याप्त है कि गुरुकुल में केवल संस्कृत का ही ज्ञान कराया जाता है, ऐसा नहीं है। संस्कृत मुख्य रूप से तथा अन्य विषयों की शिक्षा देने की भी समुचित व्यवस्था गुरुकुलों में है।

यदि समाज को संस्कारित करना है, राष्ट्र का निर्माण करना है तो विशेष रूप से शिक्षा को अपनी भारतीय संस्कृति, इतिहास व प्राचीन गौरव से जोड़ना होगा। गुरुकुलीय शिक्षा प्रणाली को बढ़ावा देना होगा। गुरुकुलीय शिक्षा प्रणाली में जंगलों में एकान्त स्थान पर नगरों के कोलाहल से दूर रमणीक विद्याध्ययन केन्द्रों पर ज्ञानार्जन होता था जहाँ अन्य विद्याओं के साथ–साथ वेदों का ज्ञान दिया जाता था, चरित्र को सुधारा जाता था। बच्चों में चारित्रिक ज्ञान कूट–कूट कर भरा जाता था जीवन को संस्कारित करते हुए बच्चों का सर्वांगीण विकास किया जाता था और वहीं से निकले छात्र बड़े होकर ऋषि महर्षि राष्ट्रभक्त योद्धा, महापुरुष एवं विद्वान बनते थे। परिवार व राष्ट्र का नाम ऊँचा करते थे। उनका जीवन सत्य पथानुगामी होता था। परोपकार उनका धर्म होता था, वह सदा मानवता के लिए जीते थे, अधर्म से दूर रहते थे। भगवान राम, योगीराज श्रीकृष्ण, हरिश्चन्द्र, स्वामी दयानन्द तथा अन्य महापुरुष ऐसे हुए हैं जो अपनी महानता के कारण प्रसिद्ध हुए हैं। इसके विपरीत आज की शिक्षा में चरित्र का ज्ञान नहीं दिया जाता। वेदादि शास्त्रों के ज्ञान के अभाव में भ्रष्टाचारी, अनाचारी, दुराचारी व्यक्तियों का निर्माण हो रहा है जो राष्ट्र को निरन्तर अवनति के गर्त में धकेलते जा रहे हैं।

अब जब पूरी शिक्षा व्यवस्था ही दूषित है तो इन परिस्थितियों में हमारे शिक्षकों को अत्यधिक संयमित, चरित्रवान एवं प्रतिबद्ध होने की आवश्यकता है। चरमराई हुई तथा दूषित शिक्षा व्यवस्था को सुधारने के लिए न केवल शिक्षक बल्कि छात्रों एवं अभिभावकों को भी अपने चरित्र एवं सोच में बदलाव लाना होगा। शारीरिक एवं मानसिक स्तर पर स्वस्थ रहते हुए उत्तम कार्य करने की इच्छा जगानी होगी न केवल अपने विषय में बल्कि दूसरे विषयों का भी व्यवहारिक ज्ञान रखना होगा एवं नैतिक एवं चारित्रिक गुणों को ऊपर लाना होगा। शिक्षकों को अपने कर्तव्यों के निर्वाह के लिए ईमानदारी से अत्यधिक परिश्रम करना होगा। क्योंकि एक सच्चा शिक्षक छात्रों में पुस्तकीय ज्ञान ही अवस्थित नहीं करता बल्कि उसके सर्वांगीण विकास के लिए प्रयत्नशील रहता है। छात्रों को आत्मशून्य होने से बचाने के लिए शिक्षकों को दृढ़ इच्छा शक्ति के साथ आगे आना होगा। लेकिन शिक्षकों को कर्त्तव्य परायण बनाने के लिए छात्रों को भी संयमित होना पड़ेगा। सबसे पहले तो उन्हें शिक्षकों के प्रति श्रद्धा बढ़ानी होगी, छात्रों को शिक्षकों के प्रति अपने कर्तव्यों का पालन करना होगा। क्योंकि शिक्षक और छात्र का सम्बन्ध जो दुनियाँ में सबसे श्रद्धेय और सम्माननीय सम्बन्ध है उसे पुनर्जीवित करने की अत्यधिक आवश्यकता है। शिक्षकों के लिए आवश्यक है कि वह ब्रह्मचर्य सिद्ध आचारवान संस्कारवान तथा योग्य हों तभी राष्ट्र का सर्वांगीण विकास होकर उन्नति के शिखर पर पहुँचेगा। क्योंकि विद्यार्थियों का जीवन कहीं बनता है तो गुरुकुलों या विद्यालयों में। सुयोग्य, चरित्रवान शिक्षकों तथा आचार्यों के द्वारा ही विद्यार्थियों का जीवन निर्माण ही, राष्ट्र निर्माण है।

विद्यार्थियों का जीवन निर्माण करने के लिए समाज को संस्कारित करने के लिए आज सबसे बड़ी आवश्यकता है कि हम सब आर्यजन गुरुकुलों को हर सम्भव सहयोग प्रदान करें तथा देश में बने प्रत्येक आर्य समाज भवनों का सदुपयोग गुरुकुल खोलकर करें। प्रत्येक आर्य समाज में लघु गुरुकुल खोलकर हम अपने बच्चों को संस्कारित भी कर पायेंगे तथा भारतीय संस्कृति के सद्गुणों से भरपूर राष्ट्र का निर्माण भी कर पायेंगे।

– प्रधान, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा
नई दिल्ली–2

सम्पादक - प्रो. विट्ठलराव आर्य

माता-पिता, आचार्य द्वारा बालकों का निर्माण

- लज्जारानी गोयल 'साहित्य रत्न'

धन्य है वह बालक इस संसार में जिसको माता-पिता व गुरु तीनों ही उत्तम शिक्षक मिल जाते हैं। शतपथ ब्राह्मण का यह वचन 'मातृमान, पितृमान, आचार्यमान पुरुषों वेद अर्थात् बालक के जीवन रूपी महल के निर्माण में माता-पिता व गुरु तीनों ही चतुर शिल्पकारों की आवश्यकता है। इसमें गुरु से सौ गुना प्रभाव माता का बालक पर होता है। तभी तो कहते हैं कि 'माता निर्माता भवति' प्रथम गुरु के नाते माता ही सच्ची निर्माता है।

माता के द्वारा बालक का निर्माण गर्भ के पूर्व से प्रारम्भ हो जाता है। इसीलिए योगीराज श्रीकृष्ण व रुक्मिणी ने बारह वर्ष ब्रह्मचर्य व्रत धारण कर प्रद्युम्न नामक बालक को जन्म दिया था। गर्भस्थिति में व प्रसव के पश्चात् माता का प्रभाव अत्यधिक रहता है। अभिमन्यु गर्भगत् संस्कारों का ही परिणाम था। चक्रव्यूह में प्रवेश करने की विद्या तो उसने गर्भ से सुन ली थी परन्तु बाहर निकलने की बात नहीं सुनी थी परिणाम स्वरूप अभिमन्यु चक्रव्यूह नहीं तोड़ सका। जैसे एक कुम्हार कच्ची मिट्टी पर रेखाएं अंकित कर अपनी तूलिका से रंग भर कर चित्रित करता है मनचाहा चित्र बना लेता है, ठीक उसी प्रकार माता बालक को जैसा चाहे बना सकती है वह चाहे तो उसमें अच्छे संस्कार भर कर मर्यादा पुरुषोत्तम राम व योगीराज श्रीकृष्ण बना दे वह चाहे तो वीर शिवा व झांसी की रानी लक्ष्मीबाई बना दे। बालक को उठते, बैठते, चलाते, बुलाते खिलौनों से खिलाते, अच्छी अच्छी कहानियों व गीत गुनगुनाते, सोते ही सोते लोरियां सुनाते बालक के हृदय पटल पर छाए रहते हैं। जीजाबाई ने शिवाजी को पालने में झुलाते-झुलाते ही उनके रग-रग में वीरता के स्वर भर दिए और वह माता के आदर्श संस्कारों का ही परिणाम था कि एक बार उनका सेनापति डोली में बिठाकर एक अत्यन्त सुन्दर स्त्री को ले आया। सेनापति समझा कि इसे पाकर शिवाजी बहुत प्रसन्न होंगे लेकिन शिवाजी की मां ने तो प्रत्येक नारी में मां का स्वरूप देखने की शिक्षा दी थी। जैसे ही सुन्दरी डोली से उतरी, शिवाजी ने मातृवत पर दारेषु का आदर्श प्रस्तुत करके सुन्दरी को प्रणाम किया और कहा कि 'माता मैं काश! तुम्हारे जैसा ही सुन्दर होता' यह कहकर सेनापति को आज्ञा दी कि 'इनको अपने घर पहुंचा कर आओ। यह है माता के द्वारा दिए गए अच्छे संस्कारों का प्रभाव। माता के द्वारा तो आंतरिक विकास होता है किन्तु पिता के द्वारा सामाजिक विकास होता है वेदों में कहा है 'सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरो जायताम' अर्थात् इस पिता का पुत्र सभ्य हो, सभा समाज में बैठने व यथोचित व्यवहार करने वाले हो। लेकिन आजकल पिता अपने यांत्रिक जीवन में से थोड़ा भी समय बालक को व्यवहारिक ज्ञान देने में व्यय नहीं करता। जब बेचारा बालक जगत की विविधता को देखकर भांति-भांति के प्रश्न पूछता है तो उसे डांट दिया जाता है इस प्रकार उसकी जिज्ञासा प्रवृत्ति कुंठित हो जाती है। पश्चिमी सभ्यता ने ऐसा रंग जमाया है कि बालक को कहीं सभा, सोसायटी व पार्टी में ले जाना भी अभिभावक पसंद नहीं करते। बालक का मन अत्यन्त कोमल होता है बचपन में माता-पिता उस पर उसी प्रकार प्रभाव डाल सकते हैं जिस प्रकार एक फोटोग्राफी की प्लेट पर चित्र अंकित हो जाता है।

बालक अनुकरणीय होता है घर में दिन रात अच्छा या बुरा जो कुछ वह देखता है उसी का अप्रत्यक्ष रूप में उस पर प्रभाव पड़ता है। माता-पिता को हर समय सचेत रहना चाहिए। मां बाप को बालकों के सामने आपस में झगड़ना नहीं चाहिए। माता-पिता समझते हैं कि बच्चा अनजान है लेकिन उन्हें इस बात का ज्ञान नहीं रहता कि बालकों की अनुकरण करने की प्रवृत्ति और ग्रहणशीलता बड़ों से कहीं अधिक होती है। एक बार की बात है कि एक पिता ने हंसी-हंसी में हजामत बनाते समय ब्लेड़ बालक की नाक पर रख कर कहा कि 'आ तेरी नाक काट दूं' दूसरे दिन मां ने क्या देखा कि नन्हा बालक कमरे में बैठकर अपने पिता के हजामत बॉक्स में से ब्लेड निकाल कर सचमुच अपनी नाक काटने के प्रयास में ही था माँ ने आवाज लगाई नहीं- नहीं ऐसा न करो। इस करतूत को पिता से कहा तब पता चला कि पिता की हंसी-हंसी में कही हुई बात का बालक ने किस प्रकार अनुकरण किया। इस उदाहरण से स्पष्ट है कि हमारे बालक वही करते हैं जो कुछ हम करते हैं। बहुत से माता-पिता बालक को लाड़ प्यार में आकर उल्लू, गधा, बदमाश आदि शब्दों से सम्बोधित करते हैं और कभी कभी बालक के हाथ से अपने मुंह पर थप्पड़ लगवा कर बड़े प्रसन्न होते हैं। जब मां बाप उसे बेईमान कहने में संकोच नहीं करते तो वह बेईमान बनने में क्यों शरमायेगा।

आज देश में धर्म निरपेक्ष का सिद्धान्त लेकर बालकों को धार्मिक व भौतिक शिक्षा से सर्वथा वंचित किया जा रहा है और इसी लिए देश में जातीयता, प्रांतीयता, अनुशासनहीनता, भ्रष्टाचार आदि का सर्वत्र बोलवाला है। विश्व बंधुत्व की भावना समाप्त हो गई है। 'वसुधैव कुटुंबकम' अर्थात सारा संसार ही एक परिवार है। हमारी प्राचीन संस्कृति से हम बहुत दूर जा रहे हैं। आज हमारे देश में भांति-भांति की योजनाएं बनती हैं लेकिन बालक जो कल देश की नैया खवैया है उसकी अर्थात् बालक की निर्माण योजना की ओर किसी का ध्यान नहीं है। हम सबको यह बात अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए कि कोई भी योजना तब तक उन्नत नहीं होगी जब तक बालकों की समुचित विकास योजना नहीं बनेगी।

आजकल पश्चिमी सभ्यता की आंधी ने धनी मानी महिलाओं को बच्चों को आया को सौंप कर क्लबों में जाने, ताश खेलने आदि की आदतों ने घेर लिया है। ये अशिक्षित आयायें बालकों को बुरी आदतें ही नहीं कुचेष्टाएं भी सिखाती हैं इस प्रकार बालकों पर उनके कुसंस्कार पड़ते हैं। मां बाप के साथ बच्चों के न जाने से संगतिकरण के बिना सामाजिक एवं व्यवहारिक ज्ञान से शून्य रहते हैं। बालकों में माता-पिता के साथ रहने से कुछ गुण तो स्वयं प्रस्फुटित हो जाते हैं। लेकिन किसी किसी में प्रवृत्ति भिन्न भी हो जाती है। आज के युग में टी. वी. का इतना बोलवाला है कि उनके प्रोग्रामों में अश्लीलता की हद होती है। आज के बालक टी. वी. के प्रोग्रामों की नकल करते हैं और उनकी बोलचाल वेशभूषा का बड़ा प्रभाव पड़ता है।

अधिकतर मां बाप चिंतित हैं कि बालकों को किस प्रकार अश्लील गानों व फिल्मों से रोका जाए। एक समस्या और है कि डॉक्टर का बाप अपने बेटे बेटी को डॉक्टर ही बनाना चाहते हैं लेकिन बालकों की रुचि के अनुसार ही उन्हें बनने देना चाहिए।

माता पिता के द्वारा तो बालक का आंतरिक व सामाजिक निर्माण होता है लेकिन आचार्य या गुरु अपने उपदेश द्वारा बौद्धिक निर्माण करता है। प्राचीन गुरुकुल प्रणाली में तो बालक को गुरु को सौंप दिया जाता था केवल किताबी पढ़ाई ही नहीं सर्वगुण सम्पन्न बालक को बनाना आचार्य का कर्त्तव्य होता था। आजकल आचार्य के प्रति सम्मान की भावना नहीं रही। धर्मशिक्षा स्कूलों में नहीं पढ़ाई जाती जिससे बालक, अनुशासनहीन व चरित्रहीन बनते जा रहे हैं। आजकल आचार्य कुछ कहें तो न उनकी कुशल न उनकी कुर्सी की। गुरुजी के सामने कक्षा में नकल की जा रही है और गुरुजी को चुपचाप आंख फेर लेना पड़ता है क्योंकि कुछ भी कहा तो बीच चौराहे पर उनकी खबर ली जायेगी। बेचारे गुरु को जान से हाथ धोना पड़ेगा। यह है हमारी आजकल की शिक्षा का कुप्रभाव। एक ओर विद्यार्थी का ये हाल है तो दूसरी ओर गुरुजी भी अपने कर्त्तव्यों को भूलते जा रहे हैं। कक्षा में इधर उधर की बातें सुना कर समय की इतिश्री करते हैं।

उपर्युक्त बातों से स्पष्ट है कि बालकों का शारीरिक मानसिक व बौद्धिक विकास माता-पिता व आचार्य पर निर्भर है। अगर ये तीनों ही समझदारी से काम लें तो बालकों में धार्मिकता, दयालुता, आत्मविश्वास, सहिष्णुता, भाईचारे की भावना आदि मानवीय गुणों का विकास होगा। आज देश में धर्म निरपेक्ष का सिद्धान्त लेकर बालकों को धार्मिक व भौतिक शिक्षा से सर्वथा वंचित किया जा रहा है और इसी लिए देश में जातीयता, प्रांतीयता, अनुशासनहीनता, भ्रष्टाचार आदि का सर्वत्र बोलवाला है। विश्व बंधुत्व की भावना समाप्त हो गई है। 'वसुधैव कुटुंबकम' अर्थात सारा संसार ही एक परिवार है। हमारी प्राचीन संस्कृति से हम बहुत दूर जा रहे हैं। आज हमारे देश में भांति-भांति की योजनाएं बनती हैं लेकिन बालक जो कल देश की नैया खवैया है उसकी अर्थात् बालक की निर्माण योजना की ओर किसी का ध्यान नहीं है। हम सबको यह बात अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए कि कोई भी योजना तब तक उन्नत नहीं होगी जब तक बालकों की समुचित विकास योजना नहीं बनेगी। किसी विद्वान का कथन कितना सत्य है कि बचपन ही पिता है बालक का। जो कुछ छः वर्ष की उम्र तक सीख लिया जाता है सारी उम्र वह बातें काम में आती हैं और उस बचपन की बेलि पर सद्गुणों के पुष्प खिलाने में माता-पिता व आचार्य तीनों ही भागीदार हैं। इन तीनों के अतिरिक्त राज्य भी अपने कर्त्तव्य से मुंह नहीं मोड़ सकता। इसलिए बालकों की उन्नति के लिए समुचित विकास की योजनाएं बनायें। अश्लील फिल्म, अश्लील विज्ञापन पर रोक लगाकर बालकों में चरित्र निर्माण में सहायक बनें।

वैचारिक क्रान्ति के लिए सत्यार्थ प्रकाश पढ़ें।

प्रिय ध्रुव के उपनयन संस्कार का साग्रह निमन्त्रण

– आचार्य महावीर सिंह

मेरे प्रियजनों विदुर जी कहते हैः–

न देवा दण्डमादायरक्षन्ति पशुपालवत्।
यंतुरक्षितुमिच्छति बुद्धया सं विसजन्तितम्।।

देवों की, पितरों की, दिव्यजनों की तथा उस परम कृपालू प्रभु की जिन पर अनुकम्पा होती है, जिन के ऊपर उनका आशीर्वाद होता है, जिन अपने कृपा पात्रों की वे रक्षा करना चाहते हैं, जिनको वे दिव्यजन सन्मार्ग पर ले जाना चाहते हैं। उसके लिए वे जैसे पशुओं की रक्षा करने वाला ग्वाला डण्डा हाथ में लेकर उनकी रखवाली करता है। उन्हें सही दिशा में ले जाता है। वैसे डण्डा हाथ में लेकर उनकी रक्षा के लिए नहीं आते। उनके मार्गदर्शन के लिए नहीं आते। वे तो बस उन्हें उत्तम बुद्धियों से युक्त कर देते हैं। जिस बुद्धि के प्रभाव से उनकी सोच उत्तम सोच हो जाती है। उनके विचार श्रेष्ठ विचार हो जाते हैं। उनका चिन्तन जनकल्याणकारी चिन्तन, परोपकारमय चिन्तन, सर्वथा धर्म के पुट से संपुटित चिन्तन हो जाता है। उनके सभी कार्यकलाप लोगों की भलाई व देश, जाति के कल्याण व उत्थान के लिए होते हैं। परोपकाराय सतां विभूतयः। समय–समय पर वे देवजन उस सात्विक बुद्धि के द्वारा अपने कृपापात्रों को सत्प्रेरणाएं देते रहते हैं।

प्रियजनों मैं भी देवजनों का, पितृजनों का, उन दिव्यात्माओं का एक कृपा पात्र हूं। उस परम कृपालू प्रभु का वरद् पुत्र हूं। जिनके संरक्षण में यह जीवन चल रहा है। जिनके मार्गदर्शन में मेरे सभी कार्य कलाप चल रहे हैं। जब कभी इस अकिंचन को निमित्त बनाकर इसके हाथों से कोई शुभ कार्य कराना होता है तो वे प्रेरक बन कर मेरी बुद्धि को प्रेरित कर विचारों की लौ जला देते हैं। उनकी पूर्ति के सारे संसाधनों को उपस्थित कर अपने इस प्रिय पात्र को उसका श्रेय दे देते हैं। बड़ी अनुकम्पा है उन दिव्यजनों की। आज प्रातः यानि 08–08–2017 को नित्य की भान्ति अपने विद्यार्थियों व अपने परिवार के साथ ओउ्म् अग्न आयाहि वीतए'' का मंत्र जपते हुए यज्ञशाला में गया तो यज्ञ करते –करते उन देवजनों ने प्रेरणा दी–वत्स! प्रिय ध्रुव कुमार का उपनयन संस्कार भी करना है। मुझे अपनी भूल का आभास हुआ। इस विषय में तो मैंने सोचा ही नहीं। मैं और–और ही कामों में उलझा रहा। पहले इन विषयों मे स्वामी जी सोचा करते थे। अब वे तो हैं नहीं। वहीं उनके उत्तरदायित्वों को आगे बढ़ाना अब मेरा ही तो काम है। इससे पूर्व के सभी संस्कार उन्हीं पूज्य चरणों के हाथों से हुए, उनकी छत्रछाया में हुए। छत्रछाया तो आज भी उन्हीं की है, आगे के संस्कारों को हमें ही माध्यम बना के उन्होंने करना है। एक बार पुनः उन देवजनों का कृतज्ञता में भरकर धन्यवाद किया। यज्ञ से उठने के बाद संस्कार विधि का स्वाध्याय किया उसमें ऋषि ने मनु जी महाराज का हवाला देते हुए लिखा हैः–

गर्भस्याष्टमेऽब्दे कुर्वीत ब्राह्मणस्योपनयनम्।
गर्भादेकादशे राज्ञो गर्भान्तु द्वादशे विशे।।

प्रिय ध्रुव 6 जुलाई से ग्यारहवे वर्ष में प्रवेश कर गए हैं। अब यह संस्कार हो जाना चाहिए। मैंने पूज्य आचार्य रामानन्द जी, जोकि मेरे गुरू जी भी रहे। वर्तमान में मेरे आदरणीय समधि जी भी हैं। प्रिय ध्रुव के नाना जी हैं। अन्य विषयों के साथ कर्मकाण्ड के मर्मज्ञ, वेद व शास्त्रों के महा पण्डित हैं। दूरभाष से सर्वप्रथम उनसे विचार विमर्श कर उनका आदेश प्राप्त किया और निर्णय लिया कि पूज्य स्वामी जी महाराज का प्रियतम कर्म ''दुर्लभ शारद यज्ञ'' जोकि 21 सितम्बर से 22 सितम्बर तक है। उससे पूर्व 18 सितम्बर से मठ का 37वॉ वार्षिक उत्सव व यज्ञ का कार्यकम है, उस अवसर पर सभी दिव्यजनों के साथ आप सभी आत्मीयजन भी उपस्थित होंगें। अन्य त्याग व तप की मूर्ति सन्यस्त वृन्द के साथ पूज्य स्वामी आर्यवेश जी प्रधान सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा तथा पूज्य स्वामी सवितानन्द जी महाराज झारखण्ड वाले भी यहां उपस्थित होंगें। गीतकार व संगीतकार, भजनोपदेशक भी आए होंगें। इस बीच इस सुन्दर अवसर पर यज्ञ, उपदेश व भजनों की पवित्र त्रिवेणी में इस पावन कर्म को भी सम्पन्न कर दें। अतः 20 सितम्बर 2017 के पूर्वाह्न में यह संस्कार सम्पन्न किया जाएगा। यज्ञ में जो लोग भाग लेने आ रहे हैं अथवा जिनका मन अभी तक नहीं बना यानि नही आ रहे थे, सभी से मेरी करबद्ध प्रार्थना है कि पूज्य स्वामी जी की धरोहर, हमारे प्रिय पौत्र व प्रिय ऋषि के आशाओं के केन्द्र, प्रिय करूणा के प्रिय पुत्र, इस संस्थान का भविष्य, इस बालक को अपने अमोघ आशीर्वादों से सींचने के लिए अवश्य–अवश्य इस अवसर पर आएं, दर्शन दें। यह बालक समाज की पूँजी है। पूज्य स्वामी जी इसी रूप में इसके निर्माण में लगे थे। अतः इसके प्रति हमारे साथ–साथ आप सब की भी जिम्मेवारी है। ईश्वर सबका कल्याण करे।

– अध्यक्ष, दयानन्द मठ चम्बा

मनुर्भव जनया दैव्यं जनम्

– अशोक आर्य

यह मानव शरीर (मानव) परमात्मा की सर्वश्रेष्ठ कृति है। इसे अशरफडल मखलूकात (प्राणियों में सर्वश्रेष्ठ) कहा गया है। नीतिकार के अनुसार आहार, निद्रा, भय तथा संतानोत्पादन आदि की क्रियाएं तो मनुष्यों एवं पशुओं में समान ही होती हैं, किन्तु मनुष्य अपने कार्यों को धर्माधर्म के विवेकपूर्वक करता है। वस्तुतः मानवेतर समस्त योनियां भोग योनियां हैं। केवल मनुष्य ही कर्म करने में स्वतंत्र है। वह चाहे तो शुभ कर्म कर सकता है चाहे तो अशुभ। शुभ तथा अशुभ, उचित तथा अनुचित का विभेद करने हेतु परमात्मा ने अत्यन्त कृपापूर्वक उसे विवेक प्रदान किया है तथा विवेक का प्रयोग कर सत्य और असत्य, शुभ और अशुभ को जानने के लिए मानव सृष्टि के आदि में ही समस्त ज्ञान भण्डार वेद भी प्रदान किया। अब यह मानव के ऊपर निर्भर है कि वेदानुकूल मार्ग पर चलकर, धर्म अर्थ काम मोक्ष के पुरुषार्थ चतुष्टय को जीवन में धारण कर जीवात्मा के अन्तिम लक्ष्य मोक्ष को प्राप्त कर लें। इसीलिए महाभारत के महर्षि वेदव्यास जी ने कहा - ''न हि मानुषात् श्रेष्ठतरं किंचित् ''अर्थात् सृष्टि के प्राणियों में मनुष्य से बढ़कर और कोई नहीं है।''

मनुष्य द्वारा आज ज्ञान विज्ञान के क्षेत्र में जो कल्पनातीत उन्नति की गई है उसे देखकर यह सत्य भी प्रतीत होता है। साहित्य, संस्कृति, कला, उद्योग, कल-कारखानों, पुलों, आवागमन एवं संचार के साधनों, कृषि, भवनों, सुखदायी संसाधनों आदि के क्षेत्र में उसने आश्चर्यजनक उपलब्धि की है। पर क्या वह सुखी है? आज प्रायः मनुष्य दुखी है, आशांकित हैं। सर्वत्र आपाधापी मची है। हर कोई दूसरे का गला काटने को तत्पर है। नैतिकता सर्वत्र तिरोहित है। यह इसलिए कि उपरोक्त सारे निर्माण जिसके लिए हैं उस मनुष्य के निर्माण की तरफ किसी का कोई ध्यान नहीं है।

वेद मां ने हमें यह निर्देश दिया ''मनुर्भव जनया दैव्यं जनम्'' - मनुष्य बनो और दिव्य संतानों को उत्पन्न करो। स्पष्ट है कि मात्र मानव योनि प्राप्त करने से ही कोई मनुष्य नहीं बन जाता। उसके लिए विशेष प्रयास करने पड़ेंगे। मनुष्यता के पर्याय दिव्य गुणों को धारण करना पड़ेगा। मनुष्य का मानस इस तरह का निर्मित करना होगा, उसके आस पास का वातावरण इस प्रकार का निर्मित करना होगा कि वह बुराईयों से दूर हट, भद्र को ग्रहण करने में तत्पर रहे।

गर्भावस्था व गर्भकाल का मानव निर्माण के संदर्भ में महत्व -

मानव निर्माण की इस सम्पूर्ण योजना की पहली सीढ़ी सत्यार्थ प्रकाश के द्वितीय समुल्लास में महर्षि दयानन्द ने प्रस्तुत की हैं बालक का जब जन्म होता है जब वह दो प्रकार के संस्कार अपने साथ लेकर आता है। एक प्रकार के संस्कार तो वह हैं जो वह जन्म-जन्मान्तरों के अपने साथ लाता है। दूसरे प्रकार के, जिन्हें वह अपने माता पिता से वंश परम्परा में प्राप्त करता है। ये संस्कार अच्छे बुरे दोनों प्रकार के होते हैं। मानव निर्माण योजना में इन पूर्व से प्राप्त बुरे संस्कारों को विनष्ट करना तथा नवीन बुरे संस्कारों को ग्रहण करने से रोकना शामिल है। ऋषियों ने इसका उपाय संस्कार बताया है। महर्षि जी ने स्व लिखित संस्कार विधि में 16 संस्कारों का विशद वर्णन किया है। माता-पिता से बुरे संस्कार बालक में न आवें इस हेतु माता-पिता को स्वयं सारी बुराइयों से बचते हुए अपने जीवन का एक सच्चे मानव के रूप में निर्माण करने के साथ-साथ गर्भाधान, गर्भकाल के समय उन समस्त नियमों का पालन करना होगा जिससे कि गर्भ में विकसित बालक में बुरे संस्कारों का प्रवेश न्यूनतम हो। क्योंकि बालक पिता के अंग से, हृदय से उत्पन्न होता है। उसका प्रतिरूप होता है।

अड्गादड्गात्सम्भवसि हृदयादधि जायसे (शतपथ 14/9/4/8)।

एतरेय के ऋषि ने कहा ''स अग्र एवं कुमारं जन्मनः अग्रे अधि भावयति'' (ऐतरेयोपनिषद् 2/3) पिता अपनी संतान के उत्पन्न होने के पूर्व उसका जैसा निर्माण करना चाहता है, नक्शा बन जाता है। जन्म लेने से पूर्व ही पिता के जैसे विचार, जैसा चिन्तन और जैसा संकल्प होता है उसी प्रकार का जीवात्मा उसके वीर्य में प्रवेश कर जाता है।

इसी प्रकार संतान का हृदय माता के बीज से उत्पन्न होता है। और रस लाने ले जाने वाली धमनियों से माता के हृदय से जुड़ा रहता है। इसीलिए सुश्रुत संहिता में लिखा है -''गर्भवती स्त्री को जिस बात में अनिच्छा होती है उसकी संतान की भी उस बात में अनिच्छा होती है। जिस बात में गर्भवती स्त्री की इच्छा रहा करती है उस बात में संतान की भी इच्छा बन जाती है।'' इसीलिए जैसे सुनार अशुद्ध सोने को अग्नि में डालकर उसका संस्कार करता है, उसी प्रकार बालक जब माँ के गर्भ में होता है, उसी समय से संस्कारों के माध्यम से उसके दुर्गुणों को निकाल कर सद्गुणों का आधान करने का प्रयत्न करना चाहिए।

यहाँ मनुस्मृति का यह श्लोक दृष्टव्य है-

यादृशं भजते नारी सुतं सूते तथाविधम्। तस्मात् प्रजाविशुद्र ध्यर्थं स्त्रियं रक्षेत् प्रयत्नतः।।9।।9।।

अर्थात् ''गर्भवती स्त्री जिस प्रकार की तस्वीर मन में खींच लेती है उसी प्रकार की संतान को जन्म देती है। इसीलिए उत्तम संन्तान के लिए स्त्री को ऐसे वातावरण में रखना चाहिए जिससे सन्तान उत्तम एवं शुद्ध विचारों वाली बने।

जब बच्चा माँ के गर्भ में होता है तब माँ की मनोवृत्ति का सन्तान के निर्माण पर गहरा प्रभाव पड़ता है। इसमें प्राचीनकाल के इतिहास के प्रमाण मिलते हैं, जैसे -

1. महाभारत में पढ़ने को मिलता है कि अभिमन्यु, माता सुभद्रा के गर्भ में चक्रव्यूह तोड़ने के संस्कारों को लेकर पैदा हुआ।

2. माता मदालसा देवी के बारे में कहा जाता है कि वह अपनी गर्भावस्था में लोरी गाया करती थीं -

''शुद्धोऽसि बुद्धोऽसि निरञ्जनोऽसि संसारमाया परिवर्जितोऽसि'' हे मेरे बेटे! तू शुद्ध है, बुद्ध है, निर्दोष है, संसार की माया से रहित है। इन संस्कारों के कारण उसकी तीन सन्तानें - विक्रान्त, सुबाहु और अरिदमन ब्रह्मर्षि बन गई। तीनों पुत्र राज पाट का मोह त्यागकर वनों को चले गये। यह स्थिति देख महाराज (उसके पति) ने कहा इस प्रकार वंश कैसे चलेगा? क्या सबको योगी बना दोगी। तब चौथे पुत्र के उत्पन्न होने के समय मदालसा ने अपनी मानसिक स्थिति बदल दी, फलतः चौथा पुत्र सर्वगुण सम्पन्न क्षत्रिय हुआ। माता मदालसा ने उसका नाम ''अलर्क'' रखा। माता ने उसे राजनीति का उपदेश दिया। उसे लोरी देते हुए कहती थीं -

धन्योऽसि रे यो वसुधाम शत्रुरेकश्चिरं पालयिताऽसि पुत्र।
तत्पालनादस्तु सुखोय भोगो धर्मात् फलं प्राप्स्यसि चासरत्वम्।।

अर्थात्, हे पुत्र! तू धन्य है जो अकेला ही शत्रुओं से रहित होकर इस पृथिवी का पालन कर रहा है। धर्मपूर्वक प्रजापालन से तुझे इस लोक में सुख और मरने पर मोक्ष की प्राप्ति होगी।

3. पाश्चात्य देशों में भी इस प्रकार के अनेक उदाहरण मिलते हैं। कहते हैं कि अमेरिका के प्रेसीडेण्ट गारफील्ड का हत्यारा गीटू जब माता के गर्भ में था, तब माता ने गर्भपात कर उसकी हत्या कर डालने का प्रयत्न किया था। वह गर्भपात तो नहीं कर सकी, परन्तु माता के गर्भ में स्थित उस सन्तान पर जो संस्कार पड़ चुके थे, उन्होंने गीटू को हत्यारा बना दिया।

4. नेपोलियन के विषय में कहा जाता है कि जब वह माता के पेट में था तब उसकी माता सेनाओं की परेड देखने में लगी रहती थी। जब वह सैनिकों को परेड करते और सैनिकों को सैनिक गीत गाते सुनती थी, तब उसका रोम-रोम प्रफुल्लित हो उठता था। गर्भावस्था में पड़े इन संस्कारों ने नेपोलियन को एक महान योद्धा बना दिया।

मनोविश्लेषणवाद के प्रवर्तक फ्रॉयड ने कहा कि बचपन में, जब बच्चे को मां, गोद में लोरियां दे रही होती है, तब उस पर जो संस्कार पड़ जाते हैं वे मिटाये नहीं मिटते, वे आजन्म साथ रहते हैं। वैदिक ऋषियों का तो यहां तक कहना था कि माँ अपनी गोद में ही नहीं, अपने गर्भ में उस पर जो संस्कार डाल रही होती है, वे गोद में दिये संस्कारों से भी प्रबल होते हैं। गोद में बैठा बालक तो माँ से अलग शरीर में आ जाता है, गर्भ में पल रहा बालक तो माँ का ही शरीर होता हे, माँ के शरीर तथा मन का अभिन्न अंग होता है, इसलिए बालक पर अपने संस्कारों की अमिट निशानी डालने के लिए उस समय माँ को सचेत तथा सचेष्ट होना उचित है।

इसी कारण वैदिक मनीषियों ने निर्देश दिए हैं कि मानव निर्माण करना है तो न सिर्फ गर्भाधान तथा गर्भकाल में विशिष्ट कर्तव्यों को ध्यान में रखना ही होगा वरन् उससे पूर्व गृहस्थ में प्रवेश करने वाले, सन्तानोत्पत्ति के कर्तव्यों का निर्वहन करने वाले पति पत्नी को स्वयं के जीवन में भी मनुष्योचित उदात्त आदर्शों को स्थान देना होगा, ताकि कम से कम उनके माध्यम से बच्चे में बुरे संस्कार न जावें। साथ ही जन्म के पश्चात् बालक के चारो तरफ, गुरुकुल में आचार्यों का सानिध्य प्राप्त करने से पूर्व, इस तरह की शिक्षा का वातावरण सृष्ट करने का दायित्व भी माता-पिता का है ताकि बालक के पूर्व जन्मों के संचित बुरे संस्कार दग्ध हो सकें तथा अच्छे संस्कार प्रभावशाली हो सकें। यह सारी बातें मानव जीवन निर्माण की प्रथम सीढ़ी (सोपान) निश्चित रूप से समझी जा सकती हैं जिनका निर्देश महर्षि जी ने सत्यार्थ प्रकाश द्वितीय समुल्लास में किया है। **- श्रीमद्दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश न्यास, उदयपुर**

योगीराज श्रीकृष्ण जन्मोत्सव के अवसर पर स्वामी शक्तिवेश जी महाराज का जन्मदिवस धूमधाम से मनाया गया

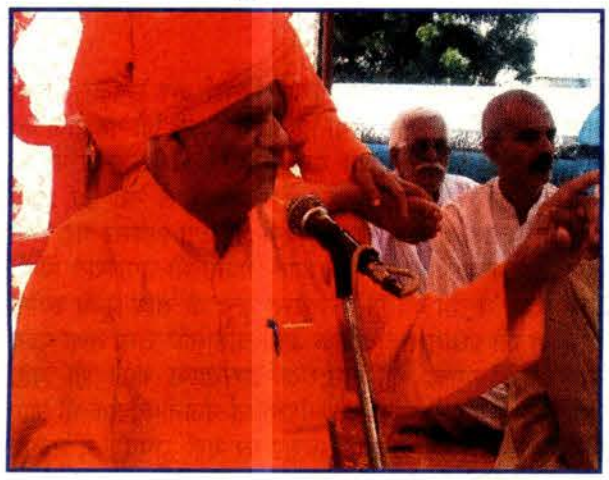

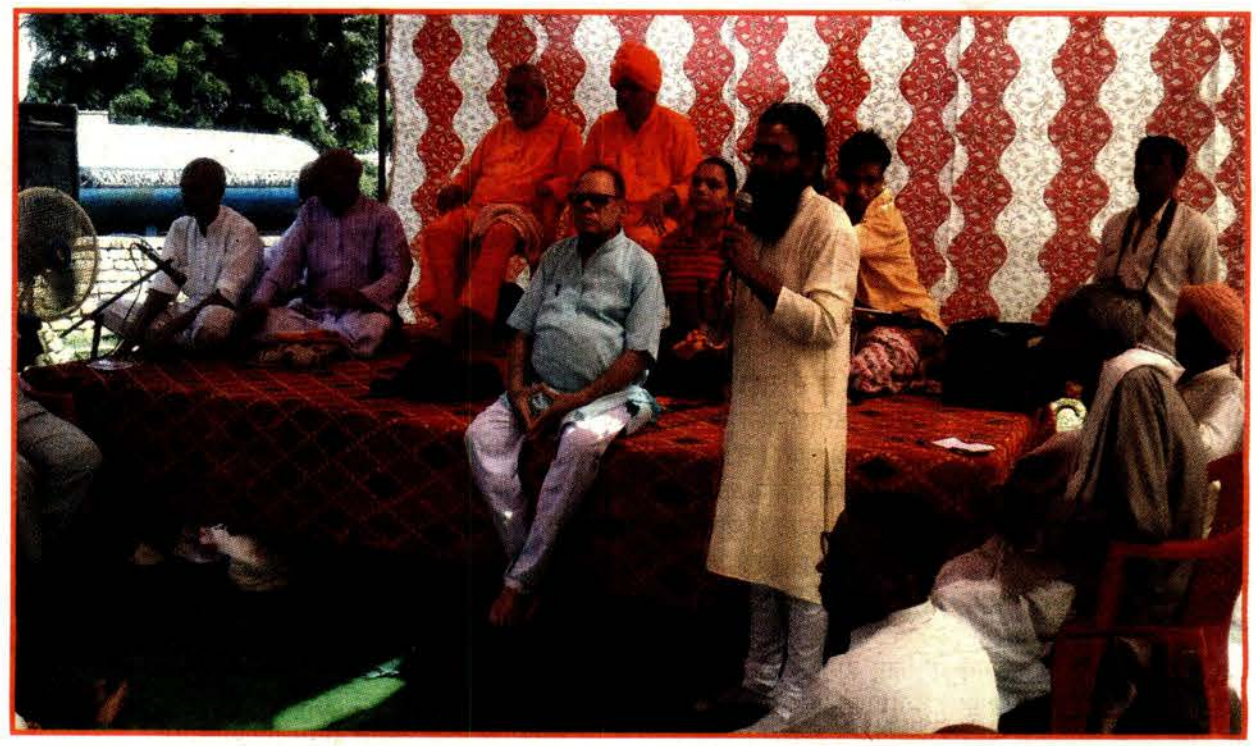

झज्जर, 16 अगस्त, 2017 को वैदिक सत्संग मण्डल समिति झज्जर एवं आर्य समाज किलोई के तत्वावधान में आर्य जगत के प्रसिद्ध संन्यासी स्वामी शक्तिवेश जी महाराज का जन्मदिवस एवं योगीराज श्रीकृष्ण जी का जन्माष्टमी समारोह स्वामी जी के पैतृक गांव किलोई में बड़ी धूमधाम से मनाया गया जिसमें यज्ञ–भजन, प्रवचन का कार्यक्रम हुआ जिसकी अध्यक्षता आर्य जगत के प्रख्यात संन्यासी स्वामी धर्ममुनि आत्मशुद्धि आश्रम बहादुरगढ़ ने की तथा स्वामी रामवेश जी महाराज जीन्द मुख्य वक्ता रहे। यज्ञ ब्रह्मा आचार्य आनन्द देव रहे व यजमान देवेन्द्र आर्य, कुणाल आर्य व विवेक आर्य रहे। इस अवसर पर योगाचार्य रमेश कोयलपुर व कुमारी दीक्षा आर्या के निर्देशन में बच्चों द्वारा यौगिक क्रियाओं का सुन्दर प्रदर्शन किया गया। ईश्वर सिंह, तूफान, श्री धनीराम

बेधड़क व पं. रमेश कौशिक द्वारा मधुर भजनों की प्रस्तुति दी गई और श्रोताओं को मन्त्रमुग्ध किया। मुख्य वक्ता स्वामी रामवेश जी ने कहा कि योगीराज श्री कृष्ण का दिया गीता उपदेश मानव कल्याण के लिए व दैनिक जीवन में अपनाने योग्य है। मनुष्य के सम्पूर्ण जीवन का निर्देशन गीता में दिया गया है जिससे मनुष्य सुख, शांति पाता है। ब्रह्मचारी दीक्षेन्द्र आर्य अध्यक्ष सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् हरियाणा ने अपने सम्बोधन में कहा कि हमें चीन के सामान का बहिष्कार करना चाहिए और अपने देश की बनी चीजें खरीदनी चाहिए। उन्होंने युवकों को आर्य समाज के कार्यों में बढ़चढ़कर भाग लेने का आह्वान किया। युवाओं को नशे की लत से दूर रहने व अपने चारित्रिक बल को मजबूत बनाये रखने का आह्वान किया। कार्यक्रम की अध्यक्षता करते हुए स्वामी धर्ममुनि जी महाराज ने कहा कि हमें अपने जीवन को अपने महापुरुषों के बताये मार्ग पर चलने के लिए कृत संकल्पित होना चाहिए। युवकों को सिने कलाकारों का नहीं बल्कि देश पर मरने वाले शहीदों की जीवनी से प्रेरणा लेनी चाहिए और जीवन को देश सेवा के लिए अर्पित करना चाहिए तभी समाज व देश में सुधार और विकास होगा। कार्यक्रम में मंच का संचालन पं. जयभगवान आर्य व सुदेश आर्य ने किया। प्रबन्ध व्यवस्था श्री देवप्रिय आर्य व देवेन्द्र आर्य की टीम ने किया। कार्यक्रम के बाद भण्डारे का आयोजन भी किया गया। कार्यक्रम में श्री द्वारिका दास रिटायर प्राध्यापक, सूबेदार भरत सिंह, श्री भगवान सिंह आर्य, राव रतीराम, ओम प्रकाश, राजेन्द्र यादव, प्रेम देव पहलवान, लीला पहलवान, कर्ण सिंह, रामकर्ण दीक्षित, करतार सिंह, मुखत्यार सिंह, जगमाल सिंह, श्री महेन्द्र सिंह प्रधान आर्य समाज बेरी, ओम प्रकाश मंत्री आर्य समाज बेरी आदि बड़ी संख्या में महिला पुरुष उपस्थित रहे। प्रतिभाशाली बच्चों व कार्यकर्ताओं को सत्यार्थ प्रकाश व अन्य वैदिक साहित्य देकर सम्मानित किया गया।

– जयभगवान आर्य, सचिव, वैदिक सत्संग मण्डल समिति, झज्जर, हरियाणा

अंधकार से ऊपर उठो

– नरेन्द्र आहूजा 'विवेक'

यजुर्वेद में मंत्र आया "**उद्वयं तमसस्परि स्वः पश्यन्त उत्तरम्। देवं देवेत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिर्उत्तमम्**" अर्थात हम लोगों ने **तमस** अंधकार या पापों या पापों के अंधकार से **उपरि** उपर उठकर **स्वः पश्यन्त** प्रकाश को देखा और परमप्रकाशक ईश्वर को पा लिया। आगे बढ़कर देखा तो अधिक तेज वाले प्रकाश को पाया और आगे बढ़े तो हर प्रकाशित व प्रकाशक वस्तु में उसी परमप्रकाशक प्रभु की प्राप्ति हुई।

मनुष्य जब तक अपने स्वार्थों के वशीभूत काम, क्रोध, लोभ, मोह, ईर्ष्या, द्वेष की कलुषित भावनाओं से घिरा रहता है तब तक वह प्रकाश को नहीं पा सकता। सत्य के प्रकाश को पाने के लिए मनुष्य को इन कलुषित भावनाओं के अंधकार और इसके जनक स्वार्थ की भावना को छोड़कर उपर उठना पड़ता है जिस प्रकार रात्रि के उपरान्त सूर्योदय के पश्चात भी यदि कोहरा छाया हुआ हो तो हमें प्रकाशक सूर्य के दर्शन नहीं होते, उसी प्रकार प्रकाश को पाने के लिए इस कोहरे रूपी अंधकार अर्थात अज्ञानता, अबोधता, स्वार्थ जैसी कलुषित भावनाओं को त्याग कर, ऊपर उठना होता है। मनुष्य यह ऊपर उठना भी एक क्रमिक विकास है जिस प्रकार घर की छत पर पहुंचने के लिए हमें सीढ़ी दर सीढ़ी ऊपर चढ़कर छत पर पहुंचना होता है ठीक उसी प्रकार अंधकार को छोड़कर प्रकाश की ओर जाना भी सीढ़ी दर सीढ़ी ऊपर चढना होता है।

इसे समझने के लिए हमें आष्टांग योग के सूत्रों को भी समझना चाहिए। यम नियमों का पालन किए बिना आसन प्राणायाम करने का अपेक्षित लाभ नहीं मिल पाता और यम नियम धारण किए बिना केवल कुछ आसन प्राणायाम का प्रदर्शन करने से कोई व्यक्ति योंगी नहीं कहलाता। ठीक उसी प्रकार अंधकार से ऊपर उठकर प्रकाश को पा लेने की यात्रा भी एक क्रमिक विकास की यात्रा है। इसमें पहले "**सवितर्दुरितानि परासुव**" अर्थात अपने समस्त दुर्गुणों दुर्व्यसनों को छोड़कर हम "**यद् भद्रं तन्न आसुव**" अर्थात अपने लिए शुभ व कल्याणकारी भावनाओं को प्राप्त करने की आशा कर सकते हैं।

तमसो मा ज्योतिर्गमय अंधकार से प्रकाश की ओर चलने की यात्रा का क्रम, अंधकार को छोड़ने से ही

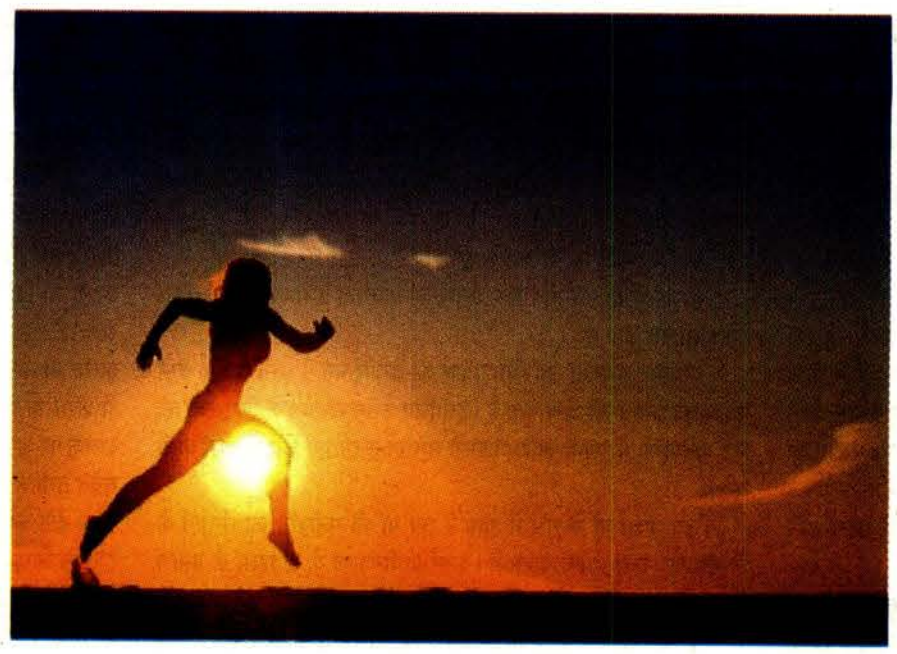

प्रारम्भ होता है। यहां **तमस** का अर्थ केवल अंधकार नहीं अपितु पाप प पापों का अंधकार भी है । पापों को छोड़े बिना पुण्य कर्म नहीं किए जा सकते। जैसे बर्तन को ठीक से साफ किए बिना उसमें शुद्ध जल भरकर भी पीने योग्य नहीं रह पाता ठीक उसी प्रकार पापों के पूर्ण त्याग के बिना पुण्य कर्म कर पाना संभव नहीं है। पापों का विष चाहे थोड़ी ही मात्रा में क्यूं ना हो वह मनुष्य के क्रमिक विकास में बाधक बनता है।

अंधकार से उपर उठकर जब हम प्रकाश को देखते हैं तो अक्सर हमारी आंखें चुंधिया जाती हैं जैसे अंधेरी सड़क पर अचानक सामने से आए वाहन की तीव्र रोशनी में कुछ दिखाई नहीं देता और हमारी स्थिति प्रकाश होते हुए भी पुनः एक अंधे सरीखी हो जाती है। ठीक उसी प्रकार जैसे अमावस्या की रात्रि में टिमटिमाते तारे को ही परम प्रकाश पुंज समझ लेना या फिर पूर्णिमा के चांद को ही समस्त प्रकाश का स्त्रोत मान लेना या फिर सूर्य को ऐसा समझ बैठना मनुष्य की अबोधता है। '**तमस उपरि**' में ये क्रमिक विकास उत्तरोतर उपर बढ़ते रहने की प्रेरणा जो इस वेद मंत्र में दी गई है वह हमें इन सभी प्रकाशित व प्रकाशक वस्तुओं से भी उपर ले जाने की प्रेरणा देती है। मील के पत्थरों को ही अपनी मंजिल मानकर रूक जाने वाले कभी अपने उद्देश्य को प्राप्त नहीं कर पाते। यदि सीधे स्पष्ट शब्दों में कहें तो ये वेद मंत्र हमें गुरूडमवाद से बचने की प्रेरणा देते हुए उसी एक सर्वज्ञ को पाने की ओर इशारा करता है। यदि हम इसे और अधिक सरल शब्दों में समझे तो **तमस उपरि** में अंधकार से उपर उठकर प्रकाश को पाने की यह यात्रा उस परमपिता परमेश्वर तक पहुंचती है जिससे इस संसार की प्रत्येक वस्तु प्रकाशित हो रही है।

आइये इस वेद मंत्र की भावना को समझकर अंतर्यात्रा को प्रारम्भ करें और अपने ही अंदर अपनी आत्मा में विराजमान उस सर्वअन्तर्यामी परमपिता परमेश्वर को अनुभूत कर उसके प्रकाश से प्रकाशित हो जाएँ और अंधकार तमस रूपी कलुषित भावनाओं से सदा सर्वदा के लिए मुक्ति पा लें।

– 602 जी एच 53 , सैक्टर 20, पंचकूला
मो. 09467608686 01724001895

दाम्पत्य दर्शन

– ब्रिगेडियर चितरंजन सावंत, बी.एस.एम.

ग्रीक दार्शनिक सुकरात एक जाड़े की रात अपने शिष्यों के साथ गोष्ठी के बाद घर पहुंचे दरवाजे पर दस्तक दी निष्फल रही। सांकल जोर से खटखटाई। दो महले पर सो रही उनकी पत्नी की मीठी नींद में कड़वा व्यवधान पड़ा। झुंझला कर उठी अपशब्दों के साथ ठंडे पानी की बाल्टी उठाई और छत से ही सुकरात के सर पर उड़ेल दी। ठंडी आह भरते हुए दार्शनिक सुकरात ने शिष्यों को सीख दी, प्यारे मित्रों विवाह अवश्य करना। यदि ममता भरी पत्नी मिली तो तन मन जीवन सुखी रहेगा। यदि मिली मेरी पत्नी समान कर्कशा, चुड़ैल प्रवृत्ति वाली तो मेरे समान दार्शनिक बन जाओगे।

दृश्य बदलता है। सहस्त्रो वर्ष पूर्व अवध की राजधानी अयोध्या। श्री राम से कैकेयी कह चुकी है कि राजा दशरथ के आदेशानुसार वह 14 वर्ष का वनवास करें। सीता जी ने अपना मंतव्य श्री राम को बताया कि वे वन में भी पति की अनुगामी बनी रहेंगी। बिना श्री राम के सूनी अयोध्या में वे एक पल भी नहीं रह सकती। श्रीराम नहीं चाहते कि सीता जी वन गमन करें। वे कठिनाइयों और संभावित विपत्तियों की चर्चा विस्तार से करते हैं। वन में हिंसक जंतु हैं, नरभक्षी दानव हैं, मानव को ताड़ना देने वाले दानव हैं, सुर–हन्ता, असुर हैं। हां, वन की तृण शैया पर अयोध्या के राजमहल में बिछे कोमल बिछौनों का शयन सुख कहां मिलेगा? इस सीता–राम संवाद में दांपत्य दर्शन का मर्म है। पति पत्नी के मध्य अपनत्व एवं त्याग की भावना प्रबल है। एक दूसरे को सुखी देखना चाहते हैं, कष्ट स्वयं सहकर। पत्नी पति के पारस्परिक मधुर संबंध के मूल में है, एक दूसरे को सुखी बनाने के लिए 'त्याग भाव'। यदि जंगल में भटक गए हैं, भूख लगी है, पास में एक ही रोटी है तो आधी–आधी खाकर सो जाने में सुख है। यदि एक अस्वस्थ है तो दूसरा चिकित्सा, सेवा सुश्रूषा करे, दोनों को सुख मिलेगा। ऐसी स्थिति में सिनेमा थियेटर क्या अकेले जाना उचित होगा? खरीदा हुआ टिकट वापस करना ही हितकर होगा। सुख–दुख बांटने वाले ही सच्चे साथी हैं, जीवनसाथी जन्म–जन्मांतर के होते हैं।

सुखी विवाहित जीवन में पति–पत्नी के बीच 'अनुकूलता' की भूमिका महत्वपूर्ण है। यदि विवाह पूर्व स्वभाव, रुचि, शिक्षा जीवन दर्शन, खान–पान एक दूसरे के अनुकूल हो तो सोने में सुहागा है। यदि ऐसा नहीं है तो विवाह के बाद 'शय्या सम्बन्ध' से लेकर उच्च स्तर के जीवन दर्शन तक अनुकूलता लाने का अथक प्रयास करना श्रेयस्कर होगा। आइए, इस पवित्र संबंध के आरंभिक चरण से आरंभ करें, 'अनुकूलता' के प्रश्न को एक विवाह के लिए वर वधू स्वयं एक दूसरे का चयन करें। वे वयस्क हैं और हित–अहित का ज्ञान है उन्हें। कन्या को अपना पति चुनने का पूर्ण अधिकार है। 'स्वयंवर' प्राचीन प्रथा है, वेदोक्त है। अथर्ववेद का मंत्र है और महर्षि स्वामी दयानंद सरस्वती ने सत्यार्थ प्रकाश में उद्धृत किया है :–

'ब्रह्मचर्य्येण कन्या युवानं विन्दते पतिम्'

इस वेद मंत्र एवं भावी वर–वधू की अनुकूलता के बारे में महर्षि दयानंद सरस्वती लिखते हैं :–

जैसे लड़के ब्रह्मचर्य सेवन से पूर्ण विद्या सुशिक्षा को प्राप्त हो के युवती, विदुषी अपने अनुकूल प्रिय सदृश स्त्रियों के साथ विवाह करते हैं वैसे कुमारी ब्रह्मचर्य सेवन से वेदादि शास्त्रों को पढ़ पूर्ण विद्या और उत्तम शिक्षा को प्राप्त युवती हो के पूर्ण युवावस्था में अपने सदृश्य प्रिय विद्वान और युवावस्था युक्त पुरुष को प्राप्त होवे।

जीवन में रुचि एक समान होने से घर के अंदर और बाहर पति पत्नी का परस्पर साथ रहता है। संवाद के अवसर भी अधिक मिलते हैं यों अपने–अपने व्यवसाय में कुछ काल के लिए तो वे अलग रहेंगे, जो उचित भी है, किन्तु उसके बाद संवाद के लिए समान विचारों से सहायता मिलती है। कार्यालय या कॉलेज के बाद घर लौटने पर रसोई में आपसी सहयोग से खाना बनाने और साथ खाने से प्रेम पुस्ट होता है। जूठा खाना मना है, दांत काटी रोटी नजदीक आने का निशान है। जब संतान का जन्म हो तो उसे मां–बाप मिलकर बड़ा करें तो अपनत्व में अमूल्य मिठास आती है। क्यों न हम कहें कि पति–पत्नी के बीच मानसिक निकटता के प्रत्येक अवसर का सदुपयोग कीजिए।

पति पत्नी के पारस्परिक सम्बन्ध में संवाद अमृत है, संवादहीनता विष है। प्रेम सम्बन्ध को अटूट करने के लिए शारीरिक संकेत – आंखें, मुखमंडल, कंधे, हाथ–पैर, आलिंगन चुंबन, भाषाई आदान–प्रदान या केवल मौन मनन सभी सहायक हैं। संवाद भंग न हो। मंत्रणा होती रहनी चाहिए। एक दूसरे की बातों पर विचारों पर तत्काल कुठाराघात न कीजिए। यदि पत्नी पालक पनीर बनाना चाहती है तो विरोध ना करें,

source - google

आपको मटर मशरूम पसंद है तो अगले दिन बना लें। एक दूसरे का समर्थन करें। समर्थन में शक्ति निहित है। एक और एक होते हैं ग्यारह। ऋग्वेद के संगठन सूक्त के मंत्र मानव समाज को एक सूत्र में बांधने में सहायक है, पति–पत्नी को पास लाने में प्रेरणा का स्रोत है। ऋग्वेद का अंतिम मंत्र है :–

समानी ब आकूतिः समाना हृदयानि वः।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति।।

हमारे हृदय और हमारे संकल्प अविरोधी हैं सदैव, मन में परस्पर प्रेम हो, सुख–संपदा बढ़ाने का वही साधन है। नव–विवाहितों को माता–पिता एवं मित्रों की ओर से संगठन सूक्त के मंत्र, हिंदी भाष्य सहित, उपहार में दिए जाने चाहिए। नव–दम्पत्ति मंत्रों पर मनन करें और नित्यप्रति के जीवन में व्यवहार में लाएं। प्रेम प्रजनन में सहायक सिद्ध होते हैं हमारे संगठन सूक्त के मंत्र। यह परामर्श अनुभव आधारित है।

विवाहित जीवन को सुखमय बनाने की श्रृंखला में एक महत्वपूर्ण कड़ी है : शय्या शिष्टाचार। शयनकक्ष में दंपत्ति को पूर्ण एकांत मिलना चाहिए। पति–पत्नी के बीच वह नहीं होना चाहिए छाया भी नहीं पड़नी चाहिए निर्मल मन और तन पर। समय है संभोग का ऋतु दान देने का, संस्कारी संतान उत्पन्न करने की प्रक्रिया का। नव–विवाहितों को साधन एवं स्वास्थ्य का ज्ञान होना चाहिए। इस ज्ञान से लज्जावश मुख मोड़ना आत्महनन समान हो सकता है। कोई शंकालु सज्जन इस सेक्स शिक्षा को वंचित मानकर नाक भौं सिकोड़ सकते हैं। ऐसे पति–पत्नी को यदि गले मिलकर ग्लानि होती है तो गृहस्थाश्रम में उनका प्रवेश भी अनुचित होगा। यदि वह गर्भाधान विधि से अपरिचित रहना चाहते हैं तो पितृ ऋण से कैसे उऋण होंगे? फिर भी सत्यार्थ प्रकाश का चतुर्थ समुल्लास उनका मार्गदर्शन कर सकता है :–

'जब वीर्य का गर्भाशय में गिरने का समय हो, उस समय स्त्री पुरुष स्थिर और नासिका के सामने नासिका, नेत्र के सामने नेत्र अर्थात् सीधा शरीर और अत्यंत प्रसन्नचित रहें, डिगें नहीं। पुरुष अपने शरीर को ढीला छोड़े और स्त्री वीर्य प्राप्ति के समय अपना वायु को ऊपर खींचें। योनि को ऊपर संकोच कर वीर्य का ऊपर आकर्षण करके गर्भाशय में स्थिर करें, उसके पश्चात दोनों शुद्ध जल से स्नान करें।

ऋषिवर प्रजनन प्रक्रिया में पारदर्शिता के पक्षधर हैं, अश्लीलता के नहीं। उन्होंने ऋतुदान और प्रजनन प्रक्रिया से अलग होने पर इस विद्या को वर्जित माना है। वैदिक मान्यता के अनुसार 'ब्रह्मचर्य के वीर्य को व्यर्थ ना जाने दे।' जो सांसारिक व्यक्ति इस आदर्श के अनुरूप शैया शिष्टाचार का पालन करने में असमर्थ हैं उन्हें भी यह जानना चाहिए कि इस मिलन में पति–पत्नी की समान भागीदारी है जो नर इस सेक्स को अपनी हवस की पूर्ति मात्र मानते हैं। वह नारी को दुखी करते हैं। फुटबाल विश्व कप के समय पुरुष देर रात तक टीवी पर मैच देखते और मैच समाप्ति पर टीवी का स्विच ऑफ करके पत्नी के स्विच ऑन करते थे। सोती जागती अलसायी पत्नी को यह सम्भोग नहीं सुहाया एकांगी सेक्स से दांपत्य में दरार पड़ी। दुखी जीव से दूर भागा दाम्पत्य सुख। जब पति पत्नी को सेक्स में समान सुख मिले, वही कहलाता है संभोग।

संस्कारी संतान आधार स्तंभ है दांपत्य सुख का। बच्चा जन्म लेते ही मां बाप के सुख का स्रोत बन जाता है कोई उसे आंखों का तारा कहता है तो कोई दूज का चांद बच्चे का सही लालन–पालन शिक्षा दीक्षा माता पिता और आचार्य का कर्तव्य है। शतपथ ब्राह्मण बल देता है 'मातृमान् पितृमानाचार्यवान् पुरुषो वेद।' अतः शिशु को जन्म देकर ही दांपत्य दर्शन की इतिश्री नहीं हो जाती। उसे भी गृहाश्रम में प्रवेश करा कर ही माता–पिता स्वयं वानप्रस्थ आश्रम में प्रवेश करते हैं। यह वैदिक परंपरा है। अपने बच्चे को वेद के अनुसार अच्छा मानव बना इसे मनुर्भव। इसका आधार है सत्य शिक्षा। बच्चे के लिए सुख सुविधा का प्रबंध अवश्य कीजिए, किंतु पढ़ाई–लिखाई से लाड़ प्यार परे रखिए। महर्षि दयानंद सरस्वती ने एक कवि के वचन को उद्धृत किया है :–

माता शत्रुः पिता वैरी येन बालो न पाठितः।
न शोभते समामध्ये हंसमध्ये बको यथा।।

सत्यार्थ प्रकाश में ऋषिवर लिखते हैं :

वे माता और पिता अपने संतानों के पूर्ण वैरी हैं जिन्होंने उनको विद्या की प्राप्ति नहीं कराई, वे विद्वानों की सभा में वैसे तिरस्कृत और कुशोभित होते हैं जैसे हंसों के बीच में बगुला।

अतः नवविवाहित दंपति स्वयं संकल्प करें कि अपने जीवन में और संतानों के जीवन में सुख का संचार अटूट रखेंगे।

– उपवन, 609, सेक्टर 29 नोएडा–201303

वेदों में व्यक्तिवाद व समाजवाद का उत्तम समन्वय

— स्व० पं० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय

वेदों में व्यक्तिवाद व समाजवाद दोनों का वर्णन करके उनका उत्तम समन्वय किया गया है। यजुर्वेद के ४० वें अध्याय में निम्नलिखित तीन मन्त्र आये हैं, मैं इन मन्त्रों की व्याख्या करने से पूर्व उनका केवल शब्दार्थ देता हूँ–

अन्धन्तमः प्र विशन्ति येऽसम्भूतिमुपासते। ततो भूयऽइव ते तमो यऽउ संभूत्याꣳ रताः।। यजु०।।६।।

अन्यदेवाहुः सम्भवादन्य-दाहुरसंभवात्। इति शुश्रुम धीराणां ये नस्तद्विचचक्षिरे।। यजु० ।।१०।।

सम्भूति च विनाशं च यस्तद्वेदोभयꣳ सह। विनाशेन मृत्युं तीर्त्वा सम्भूत्यामृतमश्नुते।। यजु० ।।११।।

(अर्थ) महा अन्धकार में वे गिरते हैं जो असंभूति की उपासना करते हैं। उनसे भी अधिक अन्धकार में वे जाते हैं जो संभूति में रमे हुए हैं। संभूति का और ही फल बतलाया है, असंभूति का और ही फल कहा है। ऐसा हमने विद्वानों से सुना है। जिन्होंने हमको इसका उपदेश दिया है, संभूति व असंभूति जो इन दोनों को एक साथ जानता है वह असंभूति से मृत्यु को तैर कर संभूति से अमृतत्व को पा लेता है। संभूति व असंभूति शब्दों के भाष्यकारों ने कई प्रकार अर्थ किये हैं।

ऊपर लिखे तीन मन्त्रों में संभूति का अर्थ समाजवाद व असंभूति का अर्थ व्यक्तिवाद मुझ को बहुत उपयुक्त प्रतीत होता है। सम् (अर्थ मिलकर) भू (होना वा रहना), इस प्रकार संभूति का अर्थ समष्टि या समाजनिष्ठा या संघभाव होता है। असंभूति का इसके प्रतिकूल मिलकर न रहना, अकेले रहना, व्यष्टि या व्यक्ति भाव है।

समाजधर्म के पालन की आवश्यकता

ईश्वर ने मनुष्य की रचना ऐसी की है कि वह अकेला नहीं रह सकता, समाज में ही रह सकता है, (डंद पे ैवबपंस दपउंस) अंग्रेजी कहावत का यही भाव हैं। असभ्य जंगली मनुष्य भी किसी प्रकार का समूह बनाकर रहते हैं। सभ्य मनुष्य ग्राम वा नगर बनाकर निवास करते हैं, बिना दूसरे मनुष्यों की सहायता के हमको अन्न वस्त्र भी नहीं मिल सकते। भोजन के लिये हमको अन्न चाहिये। उसके लिये खेती करने की आवश्यकता है। खेती के लिये हल बैल चाहिये। हल बनाने के लिये बढ़ई की आवश्यकता है। भोजन पकाने व खाने के बर्तनों के लिये लुहार आदि चाहिये, इसी प्रकार वस्त्रों के लिये रुई चाहिये, रुई को धुनने कातने व कपड़ा बुनने के लिये जुलाहे आदि की सहायता चाहिये, इस प्रकार साधारण भोजन व वस्त्र प्राप्त करने में ही हमको पचासों सैंकड़ों मनुष्यों की सहायता लेनी पड़ती है। यही समाज की रचना है। समाज में रहकर मनुष्य को कुछ ऐसे धर्मों का पालन करना आवश्यक होता है जिससे समाज के अन्य व्यक्तियों के रहन–सहन व सुख में बाधा न पड़े। ऐसे धर्मों का शास्त्रों में यम नाम रखा गया है, योगदर्शन में ५ यम इस प्रकार बतलाये गये हैं। "अहिंसा, सत्यास्तेय ब्रह्मचर्यापरिग्रहा यमाः" (अर्थात्) अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह–यम हैं, इनकी संक्षेप से व्याख्या करनी आवश्यक है–

(१) अहिंसा अर्थात् किसी दूसरे व्यक्ति को किसी प्रकार दुःख न देना। यह स्पष्ट है कि यदि इस धर्म का पालन न हो, और एक मनुष्य दूसरों को दुःख देवे, तो समाज की व्यवस्था नहीं चल सकती। हिंसा में मनुष्य हत्या से लेकर किसी को छोटे से छोटा दुःख देना भी शामिल है।

इस धर्म के कुछ अपवाद हैं, एक वैद्य या डाक्टर रोगी का रोग दूर करने के अभिप्राय से उसके शरीर में चीर फाड़ करता है, नश्तर आदि लगाता है। इसमें हिंसा दोष नही होता। राजा या न्यायाधीश एक ऐसे अपराधी को जिसने मनुष्य हत्या की है, मृत्युदण्ड देता है। यह न्याय का कार्य है, हिंसा दोष नहीं है।

(२) सत्य का बड़ा महत्व है। मनु जी ने कहा है– "न हि सत्यात् परो धर्मो नानृतात् पातकं परम्" (अर्थात्) सत्य से बड़ा कोई दूसरा धर्म नहीं है और अनृत वा झूठ से बड़ा पाप नहीं। यदि व्यक्ति सत्य का व्यवहार न करके, झूठ बोले दूसरों को धोखा देवे तो समाज का व्यवहार नहीं चल सकता। शास्त्र में कहा है कि – 'सत्यं' ब्रू यात् प्रियं ब्रूयात् न ब्रू यात् सत्यम प्रियम्। प्रियं च नानृतं ब्रू यादेष धर्मःसनातनः' (अर्थ) सत्य बोले परन्तु प्रिय वचन बोले। असत्य प्रिय वचन भी न बोले! यह सनातन धर्म है। परन्तु आवश्यकता होने पर अप्रिय सत्य बोलना भी प्रशंसनीय होता है। महाभारत में कहा गया है–

"पुरुषा बहवो राजन् सततं प्रियवादिनः। अप्रियस्य तु पथ्यस्य वक्ता श्रोता च दुर्लभः"।। (अर्थ) हे युधिष्ठिर! ऐसे पुरुष बहुत होते हैं, जो सदा प्रिय वचन बोलते हैं। पर अप्रिय और हितकारी वचन के बोलने और सुनने वाले दुर्लभ होते हैं।

बोलने में अत्युक्ति करना भी दोष है। बहुत से लोगों का ऐसा अभ्यास पड़ जाता है वे उसको दोष नहीं समझते, यदि किसी स्थान पर एक या दो सौ मनुष्य जमा हों तो ऐसे अभ्यास के लोग कहेंगे कि हजारों मनुष्य जमा थे।

सत्य के अपवाद हो सकते हैं। उदाहरणार्थ यदि किसी रोगी को क्षयी आदि कठिन रोग हो जाये, तो डाक्टर या वैद्य यदि उससे पूरा सत्य हाल कह देवे तो संभव है उसका रोग बढ़ जावे। उससे पूरा हाल न कह कर उसकी सेवा वा सुश्रुषा करने वाले से अवश्य सत्य बात कह देनी चाहिये। इस प्रकार के और भी अपवाद हो सकते हैं।

(३) अस्तेय या चोरी त्याग भी समाज की सुरक्षा के लिये अत्यन्त आवश्यक है। यदि एक व्यक्ति दूसरे का धन अपहरण कर लेवे, तो समाज में घोर अव्यवस्था हो जाये। चोरी के सिवाय अन्य प्रकार भी दूसरे मनुष्य का धन अपहरण करना स्तेय दोष है, जैसे छल करके धन प्राप्त करना। जूए से धन प्राप्त करना भी अस्तेय धर्म का भंग करना है, इसलिये शास्त्रों में जूआ खेलना पाप माना गया है। किसी प्रकार भी यदि एक मनुष्य दूसरे से ऐसा धन लेता है जिसका उसको न्यायपूर्वक अधिकार नहीं, वह पाप करता है। जैसे जमींदार का किसान से उचित या नियत लगान से अधिक धन लेना, इत्यादि।

(४) ब्रह्मचर्य का समाज की रक्षा के लिये ऐसा ही महत्व है जैसा अस्तेय धर्म का। चोरी व जारी समाज की हानि की दृष्टि से एक समान घोर पाप है। मनुस्मृति में ८ प्रकार के काम का वर्णन करके ब्रह्मचर्य के पालन का श्रेयमार्ग बतलाया गया है।

(५) अपरिग्रह– धर्म का यह अभिप्राय है कि अपनी आवश्यकता से अधिक धन वा सम्पत्ति ग्रहण न करना, वा न रखना। यदि किसी मनुष्य को उसके परिश्रम व उद्योग के बिना छल वा पाप किये इतना धन प्राप्त हो जाये, जो उसके जीवन की आवश्यकताओं से अधिक हो, तो उसका कर्तव्य है कि जितना धन अधिक है, उसको दीन व दुखिया मनुष्यों की धरोहर के समान समझे, और उसको ऐसे कार्यों में लगावे जिससे उनके दुःखों की निवृत्ति हो, जैसे कूप, तालाब, धर्मशाला व पाठशाला आदि का बनाना। अथवा उस अधिक धन को सुपात्रों को दान कर देवें, कुपात्रों को नहीं, विद्या का दान सबसे अच्छा है। मनु जी ने कहा है– सर्वेषामेव दानानां ब्रह्मदानं विशिष्यते" अर्थात् सब दानों में विद्या दान की विशेषता है।

व्यक्ति धर्म के पालन की आवश्यकता

व्यक्ति समाज का एक अंग है। उसको समाज से अनेक प्रकार की सहायता मिलती है। जिसके बिना उस का जीवन निर्वाह भी संभव नहीं। इसलिये समाज की ओर उसके कुछ कर्त्तव्य हो जाते हैं, जिनका शास्त्रों में यम नाम है, और जिनकी ऊपर व्याख्या की गई है।

परन्तु व्यक्ति का अपनी ओर भी महान् कर्तव्य है। उसका पृथक् आत्मा है जिनकी सब प्रकार उन्नति करना उसका सबसे बड़ा धर्म है। आत्मा की सर्वोपरि उन्नति मोक्ष की प्राप्ति है, जो मनुष्य योनि में ही हो सकती है। यदि कोई मनुष्य इसके लिये उचित यत्न न करे तो उसने अपना मनुष्य जन्म वृथा गंवाया। केनोपनिषद् में कहा है– **"इह चेदवेदीदथ सत्यमस्ति, न चेदिहावेदीन् महती विनष्टि। भूतेषु भूतेषु विचिन्त्य धीराः प्रेत्यास्माल्लोकादभृंता भवन्ति ।"**

(अर्थ) यदि इस जन्म में ईश्वर का ज्ञान प्राप्त कर लिया तो ठीक है। यदि इस जन्म में ज्ञान प्राप्त न किया तो भारी विनाश है, (अर्थात् जन्म ही व्यर्थ गया) इसलिये विचारशील मनुष्य सब भूतों में व्यापक उस परमात्मा को जान कर इस लोक को छोड़ते समय अमर हो जाते हैं, अर्थात् मोक्ष को पा लेते हैं।

इसलिये व्यक्तिधर्म का पालन भी मनुष्य के लिये अत्यन्त आवश्यक है, उन धर्मों का नाम शास्त्रों में नियम रखा गया है। योगदर्शन में ५ नियम इस प्रकार बतलाये गये हैं– "शौचसन्तोषतपः स्वाध्या– येश्वरप्रणिधानानि नियमाः (अर्थात्) शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वर प्रणिधान ये ५ नियम हैं। इनकी भी संक्षेप से व्याख्या करनी आवश्यक है। यह स्पष्ट है कि ये सब धर्म ऐसे हैं जिनके पालन बिना व्यक्ति का सुधार व उन्नति नहीं हो सकती। समाज के लिये इनकी उतनी आवश्यकता नहीं है।

(१) शौच अर्थात् शुद्ध रहना हर मनुष्य के लिये परमावश्यक है। अंग्रेजी में एक कहावत हैं कि (Cleanliness is next virtue) अर्थात् सफाई रखने का दर्जा धर्म के तुरन्त बाद ही है। इस के अनुसार धर्म के पीछे शौच को स्थान दिया गया है, परन्तु वैदिक धर्म के अनुसार वह नियम रूपी धर्मों ही में शामिल है, और उनमें उसको प्रथम स्थान दिया गया है। शरीर की शुद्धि स्नान से होती है मनुस्मृति में लिखा है कि– "अभिद्गर्त्राणि शुध्यन्ति मनः सत्येन शुध्यति। विद्यातपोभ्यां भूतात्मा बुद्धिर्ज्ञानेन शुध्यति। (अर्थ) शरीर के अंग अवयव जल से शुद्ध होते हैं, मन सत्य से शुद्ध होता है। भूतात्मा विद्या व तप से, और बुद्धि ज्ञान से शुद्ध होती है।

(२) सन्तोष– के लिये योगदर्शन २/४२ में कहा है– सन्तोषादनुत्तमः सुखलाभः। अर्थात् सन्तोष से सर्वोत्तम सुख की प्राप्ति होती है, वास्तव में जिस मनुष्य को सन्तोष नहीं वह सर्वदा दुःखी रहता है। परन्तु इसका अभिप्राय यह नहीं कि प्रारब्ध का सहारा लेकर उद्योग न करना, और यह समझना कि जो प्रारब्ध में है वह अवश्य हो कर रहेगा। यह सन्तोष नहीं, किन्तु आलस्य व प्रमाद है। किसी कवि का वचन है– "उद्योगिनं पुरुषसिंहमुपैति लक्ष्मी। दैवेन देय मिति कापुरुषा वदन्ति। दैवं निहत्य कुरु पौरुषमात्मशक्त्या यत्ने कृते यदि न सिध्यति कोऽत्र दोषः" (अर्थ) जो पुरुष सिंह के समान वीर और उद्योगी होता है, उसको लक्ष्मी अर्थात् धन व सम्पत्ति प्राप्त होती है। ये वचन कायर लोग कहा करते हैं कि 'प्रारब्ध से ही मिलता है।' प्रारब्ध का सहारा छोड़ कर अपनी सामर्थ्य के अनुसार पुरुषार्थ करो, यदि यत्न करने पर भी सफलता न हो, तो फिर दोष क्या है?

सन्तोष का तात्पर्य यह है कि अपनी योग्यता व सामर्थ्य के अनुसार कर्म करे। उससे जो प्राप्ति हो उस पर सन्तुष्ट रहे। यदि पड़ौसी की उससे अधिक प्राप्ति होती है तो उससे डाह वा ईर्ष्या न करे।

(३) तप– का अभिप्राय यह है कि अपने शरीर व मन को ऐसा दृढ़ बनावे कि भूख, प्यास, सर्दी, गर्मी, दुःख, सुख आदि सहने की शक्ति रहे। गीता के अ० १७ में श्री कृष्ण जी ने शारीरिक, वाङ्मय व मानस त्रिविध तप की व्याख्या की है, और सात्त्विक, राजस, तामस तीन प्रकार के तपों का भी सुन्दर विवरण दिया है, जिसको जिनकी इच्छा हो वहीं देख लेवें। आजकल कुछ नाम मात्र के साधु अग्नि के बीच में बैठकर या धूप में खड़े होकर इत्यादि ऐसी क्रियाएँ इस प्रकार से किया करते हैं कि लोग उनको सिद्धियां समझ कर उनको धन आदि देवें। श्रीकृष्ण जी ने उन को राजस वा तामसिक तप बतलाकर उनकी निन्दा की है, अ० १७ के श्लोक १८ व १९ नीचे दिये जाते हैं– "सत्कारमानपूजार्थं तपो दम्भेन चैव यत्, क्रियते तदिह प्रोक्त राजसं चलमध्रु वम्।" मूढ़ग्राहेणात्मनो येत् पीड़या क्रियते तपः। परस्योत्सादनार्थं वा तत् तामसमुदाहृतम्"।

(अर्थ) अपना सत्कार, मान वा पूजा कराने के लिये, वा दम्भ भाव से प्रशंसा कराने के लिये जो तप किया जाता है, वह राजस (रजोगुण) तप है, वह उत्तम फल या स्थायी फल देने वाला नहीं। मूर्खता के भाव से जो अपने को पीड़ा देकर तप किया जाता है, वा दूसरे मनुष्य को हानि पहुँचाने के निमित्त किया जाये, वह तामस (तमोगुण) तप का उदाहरण है।।

(४) स्वाध्याय से मनुष्य की बुद्धि बढ़ती है। गुरुकुल छोड़ते समय स्नातक को जो उपदेश गुरु द्वारा दिया जाता है उसमें "स्वाध्यायान्मा प्रमदः" कहा गया है अर्थात् स्वाध्याय में प्रमाद (वा आलस्य) न करना। फिर दोबारा "स्वाध्यायप्रवचनाभ्यां न प्रमदितव्यम्" अर्थात् स्वाध्याय व प्रवचन में प्रमाद न करना कहा गया है। ये वचन तैतिरीयोपनिषद् में है। केवल ब्रह्मचारी व स्नातकों के लिये ही स्वाध्याय की आवश्यकता न समझी जाये इस अभिप्राय से उसी उपनिषद् में विस्तार के साथ उपदेश है जिसका कुछ भाग नीचे दिया गया है– ऋतं च स्वाध्यायप्रवचने च। सत्यं च स्वाध्यायप्रवचने च। तपश्च स्वाध्यायप्रवचने च। दमश्च स्वाध्यायप्रवचने च। अतिथयश्च स्वाध्यायप्रवचने च। मानुषं च स्वाध्यायप्रवचने च। प्रजा च स्वाध्यायप्रवचने च। प्रजनश्च स्वाध्याय प्रवचने च। प्रजातिश्च स्वाध्यायप्रवचने च।।

(अर्थात्) सत्य ज्ञान के साथ स्वाध्याय व प्रवचन होना चाहिये। अतिथियों के साथ स्वाध्याय व प्रवचन होना चाहिये। सन्तान उत्पन्न करते हुए और उनका पालन करते हुए स्वाध्याय व प्रवचन होना चाहिये। इत्यादि।

(५) ईश्वर प्रणिधान, यह अन्तिम नियम बड़े महत्त्व का है। यह ५ नियमों में रक्खा गया है, और केवल इसी से समाधिसिद्धि सम्भव है। यह भी योग दर्शन में बतलाया गया है, जैसा कि दूसरे पाद का ४–५ सूत्र है "समाधिसिद्धिरीश्वरप्रणिधानात्" अर्थात् ईश्वर प्रणिधान से समाधि सिद्ध होती है। ईश्वर प्रणिधान का यह भाव है कि साधक अपना शरीर मन, बुद्धि, आत्मा सब कुछ ईश्वर को समर्पण कर देवे। यह भक्तियोग की चरम सीमा है, वास्तव में यदि कोई व्यक्ति अपना सर्वस्व तथा आत्मा भी पूर्ण रूप से ईश्वर के अर्पण कर देवे तो फिर समाधि सिद्धि में तथा मोक्ष प्राप्ति में भी क्या कमी रह सकती है।

समाजधर्म व व्यक्तिधर्म का समन्वय

व्यक्तिधर्म व समाजधर्म की व्याख्या करके मैं फिर यजुर्वेद के उन ३ मन्त्रों को दुहराता हूँ जिनका शब्दार्थ मात्र ऊपर पैरा में दिया गया था– पहला मन्त्र यह है– **"अन्धन्तमः प्र विशन्ति येऽसम्भूतिमुपासते। ततो भूयऽइव ते तमो यऽउ संभूत्याꣳ रताः।।" यजु० ४०/९** (अर्थ) वे लोग घोर अन्धकार में प्रवेश करते हैं, जो केवल व्यक्ति धर्म का पालन करते है। उससे अधिक अन्धकार में वे गिरते हैं जो केवल समाजधर्म मे रत हैं। ये दूसरा पद ठीक ही है क्योंकि व्यक्तिधर्म का स्थान सबसे ऊँचा होना चाहिये, जिसके पालन के बिना मनुष्य का जन्म ही व्यर्थ हो जाता है।

दूसरा मन्त्र यह है– **"अन्यदेवाहुः सम्भवादन्य- दाहुरसंभवात्। इति शुश्रुम धीराणां ये नस्तद्विचचक्षिरे।।" यजु० ।।१०।। यजु० ४०/१०** (अर्थ) समाजधर्म का अन्य फल बतलाया गया है। और व्यक्तिधर्म का अन्य ही फल कहा गया है। ऐसा हमने उन ऋषियों से सुना है जो हमको उसकी व्याख्या करते हैं। जैसा ऊपर वर्णन किया गया समाजधर्म के पालन का फल यह है कि मनुष्य अपने उन कर्त्तव्यों को पूरा करे, जो समाज की ओर होते हैं। और व्यक्तिधर्म के पालन का फल उन कर्त्तव्यों को पूरा करना है, जो स्वयं अपनी ओर होते हैं।

तीसरा मन्त्र यह है– **"सम्भूति च विनाशं च यस्तद्वेदोभयꣳ सह। विनाशेन मृत्युं तीर्त्वा सम्भूत्यामृतमश्नुते।।" यजु० ४०/११** (अर्थ) जो मनुष्य समाजधर्म को और व्यक्तिधर्म को दोनों को एक साथ जानता है, अर्थात् दोनों का साथ–साथ पालन करता है, वह व्यक्ति धर्म से मृत्यु को पार करके समाजधर्म से अमर हो जाता है, इस सबका सारांश यह है कि व्यक्ति धर्म व समाजधर्म में कोई विरोध नहीं है, किन्तु वे एक दूसरे के पूरक हैं। दोनों का एक साथ पालन करने से मनुष्य वास्तव में पूरा सदाचारी होता है और अपने जीवन को सफल करके मोक्ष का अधिकारी हो जाता है।

ऋषि दयानन्द ने आर्य समाज के जो १० नियम बनाये उनमें दशवें नियम का यही भाव है जिसकी ऊपर व्याख्या की गई। वह नियम इस प्रकार है–

"सब मनुष्यों को सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिये और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतन्त्र रहें।"

ऊपर लिखे मन्त्रों में जो उपदेश दिया गया, वह केवल राजनैतिक व्यवहार के लिये नहीं किन्तु सर्वधर्म के लिये है। राजनीति भी उसका एक अंग है। वैशेषिक दर्शन में धर्म का यह लक्षण किया गया है– "यतोऽभ्युदय निः श्रेयससिद्धिः स धर्मः" (अर्थ) जिससे अभ्युदय अर्थात् सांसारिक सुख व समृद्धि हो और मोक्ष की भी सिद्धि हो वह धर्म है। तीसरे मन्त्र में अमृतत्व की प्राप्ति की ओर निर्देश है, वह निःश्रेयस सिद्धि है। गत विश्व व्यापी युद्धों के कारण जो भविष्य के लिये संसार भर में पूर्ण शान्ति स्थापन करने का यत्न किया जाता है, वह अभ्युदय के अन्तर्गत है।।

आर्य समाज पल्लवपुरम, मेरठ को पुरोहित की आवश्यकता

आर्य समाज, डी–103, उदय सिटी, पल्लवपुरम फेस–2, मेरठ में एक आर्य पुरोहित की आवश्यकता है। मासिक वेतन रुपये 5000/– (विद्युत रहित ठहरने की व्यवस्था समाज की होगी) भोजन व्यवस्था पुरोहित की स्वयं की होगी। कृपया निम्न पते पर सम्पर्क करें।

– विक्रम सिंह, प्रधान, डी.–92, पल्लवपुरम फेस–1, मेरठ, उत्तर प्रदेश, मो.:–9412632812

पं. सत्यपाल पथिक का किया गया अभिनन्दन

आर्य समाज खलासी लाइन संस्था के वेद प्रचार सप्ताह के सात दिवसीय कार्यक्रम महिला सम्मेलन के अन्तर्गत आर्य जगत के विश्व विख्यात रचनाकार एवं भजनोपदेशक पं. सत्यपाल 'पथिक' का अभूतपूर्व अभिनन्दन किया गया। राजकुमार आर्य व रमेश राजा ने अभिनन्दन पत्र भेंट किया। सम्पूर्ण सत्संग हॉल को फूल मालाओं से सजाया गया था। सज्जित तोरण द्वारों को पं. सत्यपाल 'पथिक' से सम्बन्धित प्रेरक प्रसंग व उनकी दीर्घायु की कामना वाले बैनर व पोस्टरों से सुसज्जित किया गया था। पथिक जी के सभा मंच तक महिलायें व पुरुष पंक्तिबद्ध खड़े थे। उनके आगमन पर गुलाब की पंखुड़ियों की वर्षा कर उन्हें मंच तक पहुंचाया गया। जहां पर संस्था के पुरोहित ब्रह्मदेवार्य और कृष्ण लाल शर्मा ने तिलक कर उन्हें श्रीफल भेंट किया। तत्पश्चात् संस्था के संरक्षक डॉ. पूर्णचन्द व प्रधान विजय कुमार गुप्ता ने सम्मान पगड़ी पहनाई। संस्था के अन्य पदाधिकारियों ने शॉल, वस्त्र, मिष्ठान तथा सहयोग राशि भेंट कर 'पथिक' जी को फूल मालाओं से लाद दिया। अन्य संस्थाओं व महिला समाजों द्वारा बुकें भेंट किये गये।

अभिनन्दन समापन पर ओ३म् का पटका पहना कर स्वागत श्रृंखला को विराम दिया गया। संचालन नरेन्द्र गर्ग ने किया।

सम्मान से द्रवित 'पथिक' जी ने अपने भावुक उद्‌बोधन में महर्षि दयानन्द को उद्‌धृत करते हुए कहा कि ऋषि ने राष्ट्र उत्थान के लिए ईटें पत्थर खाये। 17 बार विष पिया, राजा महाराजाओं के दमन चक्र को झेला। आज उनके शिष्य का अद्‌भुत स्वागत यह महर्षि की नीतियों का प्रतिफल है। नारियों पर बोलते हुए उन्होंने कहा नारी नर व सृष्टि की निर्मात्री है। उसका शक्तिशाली होना आवश्यक है।

अजमेर से पधारे आचार्य सोमदेव ने विद्‌दोत्तमा का उदाहरण देते हुए नारी की सशक्त भूमिका को अनिवार्य बताया। मुम्बई से आमंत्रित पं. वीरेन्द्र मिश्र ने नारी उत्थान सम्बन्धित भजनों से असंख्य श्रोताओं को भावुक कर दिया।

कार्यक्रम में रविकान्त राणा, डॉ. राजबीर वर्मा, ओम प्रकाश आर्य, सुरेश सेठी, रमेश राजा, जितेन्द्र सिंह, श्याम सिंह, सुधीर पंवार, आशीष कुमार, अनिल मारवाह, डॉ. पूर्णचन्द, रामकिशोरी, मनीराम, प्रदीप कुमार, कृष्णलाल शर्मा, ब्रह्मदेव, मीनू भट्टाचार्य (डी.ए.वी. प्रिंसिपल), मीना वर्मा, शोभा आर्या, सुमन गुप्ता, अनिता आर्या, रश्मि गर्ग, योगराज शर्मा, मधुकान्त का विशेष योगदान रहा। उपस्थिति में पूरा सत्संग हाल खचा–खच भरा था।

– रवि कान्त राणा, मंत्री आर्य समाज सरदार पटेल मार्ग, खलासी लाइन, सहारनपुर, उत्तर प्रदेश

स्व. महाशय महाराम जी की पुण्यतिथि पर यज्ञ, भजन प्रवचन का अनुकरणीय कार्यक्रम सम्पन्न

झज्जर : 20 अगस्त, 2017, महर्षि दयानन्द शिक्षण केन्द्र झज्जर में स्व. महाशय महाराम जी की पुण्यतिथि के अवसर पर यज्ञ, भजन, प्रवचन, अभिनन्दन समारोह के मुख्य अतिथि डॉ. होशियार सिंह यादव (पूर्व प्राचार्य, राज. स्नातकोत्तर कॉलेज झज्जर) ने कहा कि विद्यार्थियों को कड़ी मेहनत करनी चाहिए और शिक्षक भी ऐसी शिक्षा दें जिससे विद्यार्थी आगे चलकर समाज व देश की सेवा कर सकें। विशिष्ट अतिथि आदर्श अध्यापिका श्रीमती सुमित्रा देवी (कोषाध्यक्ष, जिला वेद प्रचार मंडल झज्जर) एवं समाजसेवी श्रीमती फूलकौर दलाल ने कहा कि सुख और दुःख हमें अपने कर्मों के अनुसार मिलता है। इसलिए हमें अच्छे कार्य करने चाहिए। कार्यक्रम की अध्यक्षता पं. रमेश चन्द्र वैदिक (प्रधान, वैदिक सत्संग मण्डल समिति रजि. झज्जर) ने की। आदर्श छात्रा कु. कनिका जिन्दल ने यज्ञ सम्पन्न कराया। लाला प्रकाशवीर आर्य (मंत्री आर्य समाज झज्जर), धर्म सिंह, कृष्ण जांगड़ा (योग शिक्षक, भारत स्वाभिमान झज्जर), पं. जयभगवान आर्य, प्राध्यापक द्वारकादास, ब्र. कृष्ण जी, धर्मेन्द्र, नरेश, ओम प्रकाश शर्मा, कृष्ण शास्त्री, भगवान सिंह आदि महानुभावों ने भी समारोह को सम्बोधित किया। विजय आर्य (मंत्री, आर्य समाज थर्मल पावर पानीपत) ने मंच का संचालन किया।

आदर्श अध्यापिकाएँ कुमारी कौशल जी, श्रीमती कान्ता जी, छात्राएँ मोनिका, ईशा, छवि, सारिका, छात्र साहिल, अनिल, हेमन्त, कुनाल, सागर, सचिन, ध्रुव, पीयूष, गौरव, रूपेश, अंकुश, कार्तिक, युगम, युग नामक 20 सज्जनों को नमस्ते लेमिनेटिड फोटो से सम्मानित किया। वेदमन्त्र पाठी कन्याओं एवं साधकों को वैदिक साहित्य से सम्मानित किया गया।

कार्यक्रम में मुख्य यजमान श्रीमती मामकोर एवं श्री महाशय रतीराम आर्य, सुबेदार भरत सिंह, ओम प्रकाश यादव, चिमनलाल, मुकेश, सोनिया, अनिल कुमारी आदि उपस्थित रहे।

– सुभाष आर्य, 9813356991

श्रावणी उपाकर्म सम्पन्न

आर्य समाज, सैक्टर–22ए, चण्डीगढ़ में एक सप्ताह का दिनांक 31 जुलाई से 6 अगस्त, 2017 तक बड़े ही हर्षोल्लास से श्रावणी उपाकर्म पर चतुर्वेदशतकम का विशेष पारायण यज्ञ किया गया। जिसकी पूर्णाहुति रविवार को हुई। सैकड़ों लोगों ने अपने पुराने यज्ञोपवीत परिवर्तन कर एवं नवीन धारण कर इस महोत्सव का आनन्द उठाया। यज्ञब्रह्मा आचार्य राजू वैज्ञानिक दिल्ली थे, जिनके मार्मिक उपदेश ने लोगों का ज्ञानवर्धन किया। वेद पाठ शुद्ध सुन्दर मन्त्रोच्चारण श्रीमती विनीता वेदरत्न स्नातिका पाणिनी कन्या महाविद्यालय वाराणसी ने किया। रूड़की से श्री कल्याण सिंह वेदी के उत्तम मनोहारी भजनों ने श्रोतावृन्द को मन्त्रमुग्ध कर दिया। जीन्द से योगाचार्य डॉ. सूर्यदेव आर्य ने बड़े ही रोचक ढंग से स्वास्थ्यचर्चा में चार बातें कहीं। (1) जल्दी सोना–जल्दी उठना। (2) कच्चा आहार का सेवन दिन में एक बार अवश्य करना। (3) खिल–खिलाकार हसना व ताली बजाना। (4) प्राणायाम को समयानुसार न त्यागना। स्वामी ब्रह्मवेश जी की अध्यक्षता रही तथा प्रधान जी ने आये हुए समस्त विद्वत्‌जनों एवं सभी महानुभावों को हार्दिक धन्यवाद किया।

– प्रेमचन्द गुप्ता, मंत्री

स्वामी सवितानन्द सरस्वती द्वारा वेद प्रचार

आर्य समाज नगरोटा (बांगवा) जिला–कांगड़ा, हिमाचल प्रदेश में दिनांक 30 जुलाई, 2017 से 6 अगस्त, 2017 तक स्वामी सवितानन्द सरस्वती रांची (झारखण्ड) द्वारा अथर्ववेद मंत्रों में प्रातः एक घण्टे का यज्ञ आधा घण्टा का मानव निर्माण एवं आर्य समाज के वैदिक मान्यताओं पर विशेष उपदेश प्रतिदिन होता रहा। 6 अगस्त के पुर्णाहुति के अवसर पर आर्य समाज के विशेष उत्थान के लिए नवयुवकों से विशेष आग्रह करते हुए आर्य समाज में प्रतिदिन यज्ञ एवं संन्ध्या का कार्य होता रहे इसके लिए तीस परिवारों से सम्पर्क करने तथा एक–एक दिन का यज्ञ के लिए तैयार करने का आह्‌वान किया। बाकी पूरा महीना समाज में कार्यक्रम चलता रहे। इसके निमित्त ग्राहक पूर्णिमा ऋषि तर्पण का दिन अर्थात् 7 अगस्त से प्रातः आर्य समाज बमेंहे हर्षोल्लास से यज्ञ प्रारम्भ करने के संकल्प को पूरा करने हेतु प्रातः 7 से 8 तक कार्यक्रम होकर समाज के गतिविधि को पूरा किया गया।

सम्मान हेतु कृतज्ञता ज्ञापन

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा एवं डी.ए.वी. कालेज प्रबन्धकर्त्री समिति द्वारा जयपुर (राज.) में आयोजित महात्मा हंसराज जयन्ती पर अध्यक्ष पद्मश्री पूनम सूरी द्वारा आर्य रत्न देवनारायण भारद्वाज को वैदिक विद्वान स्वरूप सम्मानित किया गया, जिसे उन्होंने अलीगढ़ में सम्पन्न समारोह के मध्य अपने शुभचिन्तक स्नेही, श्रोताओं, पाठकों एवं सम्पादकों को समर्पित कर कृतज्ञता ज्ञापित की।

– श्रीमती दर्शन देवी भारद्वाज, प्रधान, स्त्री आर्य समाज वैदिक आश्रम, अलीगढ़, उत्तर प्रदेश

गौमाता राष्ट्र की जननी

– दीपक कुमार छिल्लर

"गावो विश्वस्य मातरः" गाय की महिमा को दर्शाता है,
गौमाता को जग–जननी का स्थान दिलाता है।
गाय की सेवा करके मिलते अच्छे संस्कार,
वात्सल्य भाव से भरपूर होता है सुखी परिवार।
गाय का दूध होता शरीर का सात्विक आहार।
सभी बीमारियों का करता आयुर्वैदिक उपचार।।1।।

गौमाता समृद्धि की प्रतीक मानी जाती है,
प्रत्येक त्यौहार पर गौमाता पूजी जाती है।
'सर्वे भवन्तु सुखिनः' मातृत्व का सार है,
गौमाता की यह ममतामयी पुकार है।
त्याग की संस्कारी भावना बतलाती है।
पालन–पोषण के तौर–तरीके समझाती है।।2।।

गाय की सेवा मानसिक शांति प्रदान करती है,
सांसारिक कष्टों, दुःखों का समाधान करती है।
गौ सेवा सम्पूर्ण जगत के लिए उपयोगी है,
सेवा का कर्त्तव्य निभाना सभी को सुखभोगी है।
अगर गोवंश को धरती पर सुरक्षित रख पायेंगे।
तभी शांति, सौहार्द, विकास की गाथा गायेंगे।।3।।

गो संवर्धन का प्रश्न मन को जगाता है,
गौमाता राष्ट्र की जननी विश्व विधाता है।
गोवंश की लाज हम तभी बचा पायेंगे,
गाय को अन्न खिलाने का वचन हम बनायेंगे।
वेदों में गौमाता की महिमा की झंकार है।
गौमाता की सेवा करना हमारे प्राचीन संस्कार है।।4।।

– मकान नं.–1022, ग्राम सभा कालोनी
सरदार पटेल झील के पास, पूठकलां
दिल्ली–110086, मो.:–9990422051

पंजीयन संख्या DELMUL/2005/15488
डाक पंजीकरण संख्या DL(c)-01/1213/15-17
Licence to Post without prepayment of Postage. [U (c)-289/2015-17]

हे वरुण ! मेरी पुकार सुन

इमं में वरुण श्रुधी हवमद्या च मृडय।
त्वामवस्युरा चके।।

—यजुः० २१/१

ऋषिः—**शुनःशेपः।।** देवता—**वरुणः।।** छन्दः—**निचृद्गायत्री।।**

विनय—हे वरुणादेव! मैं कितने दिनों से तुम्हे पुकार रहा हूँ। पुकारते–पुकारते अब तो बहुत काल बीत गया है। मेरी पुकार की सुनवाई कब होगी? लोग मुझ पर हँसते हैं। तुम्हारे प्रति मेरी व्यकुलता को देखकर मेरा ठट्ठा करते हैं और मुझे पागल समझते हैं, परन्तु मैं तो तुम्हारी शरण में आ चुका हूँ। एकमात्र तुमसे ही रक्षा पाने की आशा रखता हुआ निरन्तर प्रार्थना कर रहा हूँ और करता चला जाऊँगा। तुम्हीं को मेरी लाज बचानी होगी। क्या मैं ऐसे ही पुकार मचाता रहूँगा और तुम अनसुनी करते जाओगे? नहीं, तुम्हें मेरी पुकार सुननी होगी। हे सर्वश्रेष्ठ हे पापनिवारक! हे मेरे परम आत्मन् तुम्हें मेरी यह पुकार अवश्य सुननी होगी। तो, अब तो बहुत काल बीत चुका है। मेरा मन अपनी इस कामना को तुम्हारे आग कब से धरे बैठा है। क्या इसकी स्वीकृति का समय अब तक नहीं आया है? अब तो हे नाथ! इसे पूरा कर दो, आज का दिन खाली न जाए। बहुत बार आशा बँधते–बँधते टूट चुकी है, परन्तु आज तो निराश न होना पड़े, आज तो इस चिरकांक्षित अभिलाषा को पूरा कर दों, चिरकाल के व्यथित–व्याकुल हृदय को सुखी कर दो। यह हृदय तुममें अटल श्रद्धा रखे, तुमसे कामना के अवश्य ही पूरा होने का विश्वास रक्खे। यह बड़े दिनों से तपस्या कर रहा है, बहुत–सी निराशाओं के घावों से घायल हो चुका है, परन्तु श्रद्धा नहीं छोड़ सकता। तो आज तो इसके दुर्दिनों का अन्त कर दो, इसकी शुभाकांक्षा को मूर्त्तिमती कर दो, जिससे इसके घावों की सब व्यथा अब एक क्षण में मिट जाए। बस, आज अवश्य, आज अवश्य! पुकार मचाते–मचाते अब पर्याप्त दिन हो चुके। तुम्हारी शरण में पड़ा मैं बहुत चिल्ला चुका। अपने इस पागल का आज तो सुदिन कर ही दो और इसे अपनी गोद में उठा लो।

शब्दार्थ—**वरुणः**=हे वरुण ! **मे**=मेरी। **इमम्**=इस **हवम्**:=पुकार को **श्रुधीः**=सुन लो **अद्य च**=आज तो मुझे **मृलय**=सुखी कर दो **त्वां अवस्युः**=मैं तुम्हारी शरण में आया हुआ, तुमसे रक्षा चाहता हुआ **आचके**=प्रार्थना कर रहा हूँ।

साभार- 'वैदिक विनय' से
आचार्य अभयदेव विद्यालंकार

प्रतिष्ठा में :–

अवितरण की दशा में लौटाएँ –
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा
"दयानन्द भवन" 3/5 आसफ अली रोड, नई दिल्ली–110002

सोशल मीडिया के माध्यम से स्वामी आर्यवेश जी से जुड़ें

आर्य युवा सन्यासी व सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान स्वामी आर्यवेश जी से जुड़ने के लिए इस लिंक पर क्लिक करें
www-facebook-com/SwamiAryavesh व फेसबुक पेज को लाइक करें व अन्य मित्रों को भी प्रेरित करें।
ई-मेल : aryavesh@gmail.com
Tel. :-011-23274771

गांव बहरावद में आर्य युवा संस्कार समारोह सम्पन्न

बहरावद –आर्यसमाज सेवा संस्थान ट्रस्ट बहरावद एवं आर्य युवक परिषद नई दिल्ली के संयुक्त तत्वावधान में युवाओं के लिए संस्कार दीक्षा समारोह का आयोजन किया गया इस समारोह में बुलंदशहर,अलीगढ़ एवं हाथरस जिलों के युवाओं ने भाग लिया। दिल्ली विश्वविद्यालय के छात्र प्रमोद,उदयवीर एवं रूपेन्द्र आर्य ने युवाओं को नशे के खिलाफ जाग्रत किया। कु० माधवी , चंचल एवं ज्योति आर्या ने समाज सुधार विषयक गीत प्रस्तुत करके श्रोताओं का मन जीत लिया। श्री धर्मपाल ,नरोत्तम एवं अशोक बौहरे ने संयोजन किया। दूर दराज से पधरे युवाओं ने नशे एवं कुरीतियों के खिलाफ पूरे गांव में जागरण यात्रा निकाली।

दिल्ली से पधारे केन्द्रिये आर्य युवक परिषद के उप संचालक श्री रामकुमार सिंह आर्य ने समारोह की अध्यक्षता की। अपने क्रांतिकरी उद्बोधन में उन्होंने महापुरूषो के उदाहरण देकर युवाओं को ऊचा उठने की प्रेरणा दी। आर्य विद्वान श्री संतोष शास्त्री ने लगभग एक सौ बाल वृद्ध एवं युवाओं को दीक्षा देकर संकल्प कराया कि वे किसी भी प्रकार के नशे से दूर रहेंगे।

दिल्ली से ही पधारे श्री शिशुपाल आर्य जी ने अपने क्रांतिकारी भजनोपदेशों द्वारा जीवन को सार्थक बनाने की प्रेरणा दी। बागपत से पधारे वैदिक बिद्वान श्री पंडित ईश्वर सिंह आर्य जी ने ग्रामीणों में व्याप्त अंधविश्वास एवं कुरीतियों का खंडन किया। प्रसिद्ध लोक गायक श्री बाबूलाल बहरावदी ने अपने सुपरिचित अंदाज में महर्षि दयानंद सरस्वती जी की जीवन गाथा प्रस्तुत की। मास्टर सत्यपाल,नाहर सिंह,प्रकाशी ,बंटी,लोकेश आर्य एवं सागर ने दूर दूर से पधारे अतिथियों का स्वागत एवं सत्कार किया। कार्यक्रम का संचालन मुम्बई से पधारे श्री कमल आर्य जी ने किया।

प्रो० विट्ठलराव आर्य, सभा मंत्री, प्रकाशक व मुद्रक द्वारा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, 3/5 महर्षि दयानन्द भवन, (रामलीला मैदान/आसफ अली रोड), नई दिल्ली-110002 के लिए प्रकाशित तथा ज्योति प्रिंटिंग प्रेस, ई-94, सैक्टर-6, नौएडा-201301 से प्रकाशित एवं मुद्रित। (फोन : 011-23274771, 23260985 टेलीफैक्स : 23274216)
सम्पादक : प्रो० विट्ठलराव आर्य (सभा मन्त्री) मो.:0-9849560691, 0-9013251500 ई-मेल : sarvadeshik@yahoo.co.in, sarvadeshikarya@gmail.com वैबसाइट : www.vedicaryasamaj.com
वैदिक सार्वदेशिक साप्ताहिक में छपे लेखों तथा विचारों से सम्पादक या सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की सैद्धान्तिक मतैक्यता होना अनिवार्य नहीं है।